युवक वीरों ने पार्वती की बातें सावधानी से सुनी और फिर उनसे विनय किया "माता बहुत अच्छा यदि तुमको चलनाही है तो विलम्ब करने से क्यांप्रयोजन । कृपया शीघ्र हमारे साथ चलें, शत्रू हमको बडी निष्ठुरता और निर्दयता से परास्त कर रहे हैं खेत, जङ्गल गांव और नगर सबमें आग लगादी जाती है, सब बातकी बात में राख होजाते हैं, बेचारे हमारे देश भाई घर और धनहीन होकर कष्ठ और दुःख सह रहे है ॥

युवकों की यह विनती सुनकर पार्वती उसी समय उठ खड़ी हुई। योगियों के बस्त्र उतार कर रख दिये और राजसीय पटाभूषण से आभूषित होकर कैलाश के केवल दस बीस मनुष्यों को साथ लेकर पर्वत से नीचे उतरी और रणभूमि की ओर चल निकली।

प्रभात का समय था, भीनी भीनी सुगंध

सूचीपत्र।

कांपता था क्रमशः यह बातें शुम्भ और
निशुम्भ के कानों तक पहुंचाई गईं उसने
दो चार मनुष्यों को इन बातोंके पता लगाने
के लिए भेजा। इन सब ने आकर देवी से
कहा "सुन्दरी तू कौन है? महाराजा शुम्भ
तेरे दर्शन का अभिलाषी है, वह कहता है
देवीको सन्मान पूर्वक लावो और हम सब
इसी हेतु तेरी सेवामें उपस्थित हुये हैं। पा-
र्वतीने हँसकर उत्तर दिया 'मैं उसकी हूं जो
मुझे रणक्षेत्र में परास्त करसके, जो मेरा
दर्शनाभिलाषी हो वह मेरे सामने आवे
और इस रणभूमि में मेरे साथ संग्राम
करे। शुम्भ को यह सूचना दीगई। उसने
एक बलिष्ठ पुरुष को देवी के विजय के
लिए भेजा और उसको समझा दिया कि
देखना कदापि उसका बध न करना किन्तु
उसको जीवित बांधकर ले आना। वह शुंभ

ओ३म्

भारतवर्षकी सच्ची देवियां।

प्रथम भाग
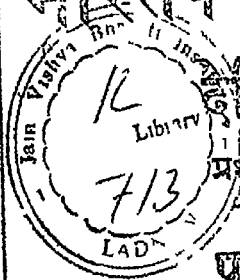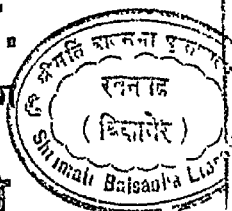
पार्वती

पार्वती राजा हिमाञ्चल की कन्या थी, उसका विवाह शिवजी के साथ हुआ था जब से पार्वती विवाहिता होकर कैलाश में आई। उस पहाड़ी भागकी दशा कुछ और ही होगई। मनुष्य जीवन की जितनी उपमा है वह निस्सन्देह स्त्री ही पर निर्भर है। जिस घर में स्त्री न हो वह घर उजाड़ और

और अनीतियों से कितने कुलों का
नाश होगया।

बेचारे जगन्नाथ को भी दुर्दशा आगई
उसके जीवका की भूमि पर महसूललगाया
गया मर्य्यादा नाश होनेके भयसे उसने
सारी पूंजी बेचडाली, परन्तु इस दुष्टता के
विषय फंदे से छूटना असम्भवथा! अकाल
पड़ांही था, तीन २ दिन तक उपास होने
लगो, कमला के तन पर वस्त्र तक नहीं था
उसकी कमर से एक फटी पुरानी धोती
बँधी रहती थी। सिर खुला रहता था। बे-
चारी लज्जा के मारे बाहर नहीं निकलती
थी और दोनों छोटे बच्चोंकी छाती से लगाये
घर में पड़ी रहती थी। जगन्नाथ ने यह
दशा देखकर कई बेर प्राण दे देना चाहा,
परन्तु कमला उसको इस कार्य्य से रोकती
थी, परन्तु यह दशा कबतक रह सकती थी

पिशाच स्थान प्रतीत होता है। जिधर दृष्टि डाली जाय उधर सूनसान और उचाट दिखलाई देता है। मनुष्य ऐसे सोभा हीन स्थान में निवास करना कदापि स्वीकार नहीं कर सकता।

स्वाभाविक सौन्दर्यता, ईश्वर की सृष्टि की सुहानी रचना, जिससे मनुष्य को स्वाभाविक सुख मिलता है वहां कभी नहीं प्राप्ति होसकती जहां जगतोत्पादक स्त्री न हो। एक शुद्ध आचरणवाली स्त्री ऐसे उदासीन स्थान को अपने चरणों से पवित्र कर देती है। तो वह क्षणमात्र में कुछ का कुछ बन जाता है। जो स्थान पहिले सदा अन्धकार मय रहता था अब पवित्र देवी के आते ही उस में सूर्य्यवत प्रकाश होने लगा है जहां चारो ओर सुनसान और उचाट दिखाई देता था अब वह आनन्दमय और सुहाव-

तो सीधे स्वर्गको पधारेंगे, यदि जय होगी तो सतकीर्ति की ध्वजा संसार क्षेत्र में फहराती हुई आर्यबंश कीअचल वीरता को प्रमाणित कर दिखायेगी ॥

रानी ने कहा इसमें कुछ सन्देह नहीं। परन्तु शत्रू से सदैव सचेत रहिना चाहिये बुद्धि द्वारा तो यह बिख्यात होता है कि प्रत्येक मनुष्यके साथ उचित व्यवहारसे काम लेना चाहिये परन्तु कभी २ मनुष्य अधर्म युद्ध करके भी शत्रूको जय करलेता है। और मुसलमान इन बातों में बड़े प्रवीण हैं"सूर्य देवने रानी को धैर्य देने के निमित्त कहा। हम हरएक भांति शत्रू से लड़ने को उद्यतहैं तुम कुछ चिन्ता न करो ॥

सभा उठगई सब लोग सोने चले गये, रक्षा के निमित्त रक्षक चारों ओर नियत कर दिये गये। राजपुत्र हर प्रकार से स्व-

नो प्रतीत होने लगा है। जहां चारोंओर शोक ही शोक दिखाई देता था, अब वहां पवित्र देवी के आते ही सुखकी दृष्टि होने लगी है। और सारा स्थान आनन्द और सुख का सम्पादक बन गया है। किसी ने सच कहा है।

बिन घरनी घर भूतका डेरा

और यह क्यों ऐसा होता है? अनुमान से प्रकट होता है कि स्त्री के स्वभाविक गुण और दयामय हृदय में स्वार्थ हितैपिता लेश मात्र भी नही होती वह प्रेम और दयाकी दिव्य मूर्ति है कोमलांगी स्त्रीके गुण कर्म और स्वभावकी विलक्षणता उसके पति पर निर्भर होती है। मातृ अवस्थामें स्त्री अपना समय अपने बालकों के यथावत लालन

देखते देखते वह देवी स्वर्गधामको सिधार गई उसकी महिमा एक कवि इस प्रकार वर्णन करता है ॥

धनि धनि भारत की क्षत्राणीं । वीर कन्याका वार प्रसोनी वीर बधू जगजानी ॥ सतीशिरोमणि धर्मधुरन्धर बल बुधि धीरज खानी । इसके यशकी तिहूं लोक में अमल ध्वजा फहरानी । धनि २ भारतकी क्षत्राणी ।

और अग्नि पुष्पक पर चढ़कर नीलदेवी पति लोक को चलीगई ।

यह देवियां थीं, जिनके चरण कमलों से भारत भूमि पवित्र होती थी । परन्तु हाय !

दोहा ।

नहिं वो रैन न दिवस वो, नहिं वो वीरमहान
नहिं वो देवी जगतमें, है इक नाम निशान

—o—

पालन में व्यतीत करतीहै। उनके सुख को अपना सुख और उनके दुःख को अपना दुःख समझती है। स्त्री पृथ्वी पर चन्द्रवत प्रकाशमय है जिसके स्वच्छ प्रकाश से अविद्यादि दोषउपाधि रूपी रात्रि का तिमिर नष्ट हो जाता है। और जिसकी यथावत् प्रतिष्ठा और सन्मान करनेसे मनुष्य सुखका सम्पादक बनजाता है। हे मतमतान्तरों पर आक्षेप करने वालो ! इस स्वभाविक प्रेमकी ओर दृष्टि डालो। तुम सच्चे प्रेमकी शिक्षा एक सामान्य स्त्री से लो। जिस में स्वार्थ साधन छल और कपट का नामभी नहीहै। सत्य भाषण, सत्य विचार, सत्य आराधन, दया और उदारता की शिक्षा पवित्र स्त्रीके अतिरिक्त और तुम को कौन दे सकता है सामुद्रिक कोष इतने बहुमूल्य नहीं। पर्वत की खानि इतने बहुमूल्य रत्न नहीं जितनी

एक सुशिक्षित और गुणवती स्त्रीका आच-रण है वास्तव में वह एक चन्द्रवत प्रकाश मय रत्न है जिसकी शोभा मनुष्य के मनको मोहित करलेती है और जिस का प्रकाश मनुष्यके निःकृष्ट आचरणरूपी तमको शीघ्र ही नाश करदेता है। स्त्री एक कामधेनु के तुल्य है जिस से सर्व सुखमय पदार्थ मिल सकते है स्त्री को यथावत रक्षा सन्मान और प्रतिष्ठा करने से मिट्टी का घर भी सोने का बनजाता है। समर विजयी और स्वतन्त्र शूरवीर भी स्त्रीके पवित्र और स्ववश करने वाले स्वभाव का दम भरते है। सच है

* श्लोक *

यत्रनार्यस्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु नपूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाःक्रियाः॥
शोचन्तियामयोयत्र विनश्यत्याशुतत्कुलम्।
ना शोचन्ति तुयत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा॥

अर्थात्—जिस जगह स्त्रियों का सन्मान होताहै वहां पर देवता लोग रमण करते हैं जहां इन की पूजा अर्थात् सन्मान नहीं होता वहां सम्पूर्ण क्रियायें निष्फल होजाती है जहां पर स्त्रियां दुखित रहकर सोचती हैवह कुल शीघ्रही नष्ट होजाता है और जहां यह सुखी रहती है उस कुलकी सदैव वृद्धि होती है॥

पार्वती कैलाश में व्याह कर आई। शिवका प्रेतस्थान उसके आते ही स्वर्ग धाम बनगया। महात्मा शिवको लौकिक व्यवोहरों से क्या प्रयोजन! वह तो किसी और ही ध्यान में मग्न रहते थे। पार्वती को कैलाश के सांसारिक रचना का भी ध्यान रहताथा। आश्रम के चारोंओर सुगंधित पुष्पादि कियारियों में लगगये। वायु के साथ भीनी २ महक से सारा आश्रम सुग-

न्वित होगया। पर्णकुटी के आस पास हरी भरी बेलोंकी कुछ विचित्रही शोभा झलकने लगी। जिधर दृष्टि डालिये कुछ और ही उपमा दिखाई देती है। सारा आश्रम हरा भरा भांति २ की पुष्प लतायें, कहीं फूल खिल रहे है, कहीं कलियां चिटक रही हैं। भ्रमर गूंज रहे है, छोटे २ पक्षियो की सुहावनी रागिनी से वाटिका गूंज रही है। मानो वह पार्वती को इस विचित्र रचनाका धन्य वाद देरहीहै। थोड़ेही दिनमें कैलाशकी शोभा अवलोकनीय होगई। प्रभात हुआ सूर्य्य की अरुण किरणें पृथिवीतल पर फैल गईं भांति २ के पक्षी वृक्ष लताओं पर स्वाभाविक ईश्वरीय गीत गाने लगे। वनचर पशुकुरंगादि निर्भय चितहोकर पहाड़ोंपर कूदते फांदते किलोल करते हुए ईश्वर को अपने स्वाभाविक स्वतन्त्रता का धन्यवाद

देते थे। जहां निर्दोष पवित्र आत्मायें होती हैं वहां पर तामसी कामनायें स्वयं ही अलोप हो जाती हैं।

कैलाश एक रमणीक स्थान बनगया और उसकी शोभा अवलोकनीय होगई न कोई जीव को कोई कष्ट देताथा सच है अहिंसा की शिक्षा पर चलनेवाले मनुष्य अपने चारों ओर शांति और सुख फैला देते हैं।

पार्वती के आने से शिव को जो आनंद हुआ उसका तो कहना ही क्या है। जब दो पवित्र आत्माओं का सम्बन्ध होता है तो चित्त को कुछ विचित्र ही आनन्द होता है। दोनों कैलाश में सुख पूर्वक अपनी आयु व्यतीत करने लगे। शिव और पार्वती दोनों नम्र, सुशील, शान्तचित्त और शुद्ध आत्मा थे। दोनों के हृदय में ईश्वर के अनुराग, प्रेम और बैराग्य की नदी प्रवाहित थी दोनों

शुद्ध आत्मा सांसारिक क्षणभंगुर कामनाओं को तुच्छ समझते हुए अपने कर्त्तव्य की यथावत पालना करते थे।

समयानुकूल पार्वती के गर्भ से दो बालक उत्पन्न हुए जिनको स्वयम् उनकी माता ने शिक्षा दी थी। और वे उस समय विद्या, शौर्य्य, धैर्य्य, चातुर्य, और पराक्रम में अ-द्वितीय थे। जिनकी नीतज्ञता और विद्वत्ता का कारण केवल उनकी माता पारवती थी।

पार्वती की यदि जीवनी लिखी जाय तो सम्भव है कि एक महान् पुस्तक होजावे। सच तो यह है कि यदि साधारण लेखों का विश्वास किया जावे तो निःसन्देह यह कहना पड़ेगा कि पार्वती अनेक अलंकारों की अधिष्ठाता थी, जब कभी शिव समाधि से उठते थे और बातचीत का अवसर आ-पड़ा था तो देवी उनसे प्रायःविद्या सम्बन्धी

प्रश्नकर बैठतीं थी। एक प्रकार का शा-
स्त्रार्थ होताथा और शिवजी नम्रता और यो-
ग्यता से देवी को उसका प्रश्नोत्तर देते थे।
यह बार्तायें प्रायः मोक्षऔर वैराग्य प्रकरणों
पर होती थीं इनके अतिरिक्त और भी इसी
प्रकार की बहुतसी बातें होती थीं। जो
सांसारिक विषयों से सम्बन्ध रखती है
परन्तु दुर्भाग्य बश वे अनमोल रत्न अब
ऐसे गुप्त होगये हैं जिनका कहीं पता नहीं।
पौराणों में प्रायः उनके चरित्रों पर लेख है
जिन से उनका केवल स्मरण होता है परंतु
यह भी संस्कृत कविता के अलंकारों से
आभूषित है। जो विद्यार्थियों के अवश्य
अवलोकन करने योग्य हैं।

पार्वती बड़ी, सुशील और शांति चित्त
वाली स्त्री थी जब कभीं शिव के साथ वह
सैर करने के लिए बाहर निकलती और

किसी को दुखी या कष्ट में देखती तो वह यथाशक्ति उसके दुख दूर करने का प्रबंध करती थी। वह देशाटन की अवस्था में है, दूर से भी दुःखमय आरत स्वर सुनाई देता है, पार्वती कहती हैं, "हे भगवन्! कोई दुखिया रो रहा है चलिये देखें उस पर क्या आपत्ति आई है"। शिव कहते हैं "हे प्रिये! यह दुनियां है, इसमें अनेकों प्रकार की आपत्तियाँ आया करती हैं, तू किस किस के दुःख को निवारण करेगी! तो पार्वती सजल नेत्र होकर कहने लगती" स्वामी! यह सच है परन्तु दया और करुणा भी तो मनुष्य के स्वाभाविक गुण हैं"और दोनों पति पत्नी उस दुखिया के पास जाते उससे विलापका कारण पूछते और यथाशक्ति उसकी सहायता करते। पार्वती को आए हुए बहुत समय होगया परन्तु उसकी उदारता, दयालुता,

विद्वत्ता, नीतिज्ञता, और इसी प्रकार के अनेक चरित्रों की कहानियां आप हिन्दू घरों की बहू बेटियों से प्रायः सुनेंगे और उनके कहने सुनने में केवल वह गुण ग्राहक नहीं होती हैं वरन् स्त्री कन्याओं को उससे शिक्षा लेती हैं।

पार्वती के चित्त में इतनी शांति थी, कि वह अपने आचरणों द्वारा सब को प्रसन्न रखना चाहती थी। शिवजी को भी प्रायः इसी नियम पर चलने की चेष्टा प्रगट करती थी। परन्तु महात्मा शिवजी यह जानते थे कि यह बात असम्भव है। इस पर शास्त्रार्थ हो पड़ा, शिवजी ने मुसकरा कर कहा कि "जब तक तुम को उदाहरण द्वारा इसका प्रमाण न दिया जायगा तुम कभी न मानोगी' इस बात पर दोनों भेष बदलकर अपने वाहन को साथ लेकर कैलाश से बाहर निकले।

पहाड़ी देशोंमें अब भी प्राय: बैल पर सवारी की जाती है, शिवजी की सवारी में भी बैल ही रहा करता था। बैल पर किसी को सवार न देखकर दो चलते हुए पथिकों ने कहा देखो यह कैसे मूर्ख लोग है बैल को यों हीं लिये जारहे हैं, इतनी समझ नहीं कि उस पर एक सवार होजाय। शिवजी यह सुन कर बैल पर सवार हुए और आगे बढ़े। थोड़ी दूर गए होंगे कि एक दूसरे मनुष्य ने कहा " तुम कैसे मूर्ख आदमी हो तुम को लज्जा नहीं आती, कि तुम्हारी कोमलांगी स्त्री पांव घसीटती चलती है और तुम हट्टे कट्टे बैल पर सवार हो शिवजी उतर पड़े पार्वती, को बैल पर सवार करा दिया। थोड़ी दूर पर एक और मनुष्य मिला उस-ने कहा 'देखो कैसा समय आगया है कि पति तो पांव घसीट रहा है और स्त्री सवार

चली जा रही है, यह बेल ऐसा है कि चाहें तो दोनों सवार होलें। पार्वती को लज्जा आई उतरने लगीं तो शिवजी ने मुसकरा कर कहा ठहरो और आप भी! हवार होगए थोड़ी देरमें और दो तीन आदमी आरहे थे वह बोले भाई अनुमान से प्रतीत होता है कि यह बैल मँगनी का है तभी तो उसपर दोनोंके दोनों लदे हो तुम्हारा होता तो ऐसा न करते। तुम दोनों हृष्ट पुष्ट हो कि यदि चाहो तो उसे अपनी पीठ पर लाद लो शिवजी यह सुनकर उतर पड़े और बैल को एक बांस के डंडे में बांधकर एक सिरा उसका पार्वती के कन्धे पर और एक अपने कन्धे पर रख और आगे बढ़े। सामने बहुत से युवा मनुष्य आरहे थे। सब इस अद्भुत चरित्र को देख कर तालियां पीटने और

शिवजीको बुराभला कहनेलगे। बैल बेचारा सीधा साधा जीव बच्चों के तालिध्वनि और शिवके इस बर्ताव से घबड़ाकर हाथ पांव मारने लगा रस्सेको तोड़कर सेत परसे नदी में कूद पड़ा शिवने उसको पानी से निकाला और पार्वतीजीसे कहा " प्रिये ! देखा यह संसार है जो इसको प्रसन्न करना चाहे वह मूर्ख और ना समझ है पार्वती ने लज्जा से कुछ उत्तर नहीं दिया ॥

और भी इसप्रकारके सैकड़ों उदाहरण मिलेंगे जो पार्वती और शिवके चरित्रों को प्रकट करते है यदि यह सब एकत्रित करके लिख जावें तो पढ़ने योग्य होंगे।

पार्वती में जहां स्त्रियों के सब गुण थे वहां देश प्रबन्ध कार्यों को भी जानती थी। वह देश रक्षा में स्त्री और पुरुष दोनों के कर्तव्यों को एकसा प्रतीत करती थी वह

यह भी न जानती थी कि देश रक्षाके लिये स्त्री और पुरुष दोनों में इतनी वीरता होनी आवश्यक है कि वह दूसरों के आक्रमण और अनीतियों से भलीभांति अपने देशकी रक्षा करसकें। पार्वतीने प्रायः अपनी वीरता दिखाई। वह कई बार रणक्षेत्र में ऐसी वीरता से लड़ी कि शत्रुओं के छक्के छूटगये लोहू की नदी वह निकली। इन सब को कई पृष्ठों में तो लिखना कठिन है। उदाहरणकी भांति हम थोड़ासा अवश्य लिखेंगे।

शुम्भ और निशुम्भ नाम के राक्षसों ने एक समय अफगानिस्तान की राहसे आर्य्यावर्त पर आक्रमण किया खेतों को नष्ट कर दिया। कितने गांव उजाड़ दिये कितने नगर और बस्तियों में अत्याचार करना आरम्भ कर दिया, आर्यदल ने कई बार शत्रुओं का सामना किया परन्तु जय न

करसके। एक एक करके सब योधा रण में काम आये शूर वीरों का धीर हृदय कांप उठा। जब कोई संग्राम करने योग्य न रहा और स्वजातीय वीरों को शत्रुओं ने मार गिराया तो आर्य दल इधर उधर भाग निकला। दो चार दिनके पीछे सब लोगों ने फिर एकत्रित होकर एक सभा की जिस में यह निश्चित हुआ कि राजऋषि दधीचि को युद्ध करने के लिये निमंत्रित करना चाहिए। यह ऋषि वृद्ध होगये थे। इनकी कटि तक टेढ़ी होगई थी, परन्तु देश रक्षाके लिये संग्राम करने से कब रुक सकते थे। वह तपोबन के बास को छोड़ केवल देश रक्षा के लिये रणभूमि में आ उपस्थित हुये इन के आने से फिर वीरों में जानें आगईं। सब इनीके झंडे तले आ उपस्थित हुए और संग्राम के लिये उद्यत होगए। परन्तु दधी-

चि वृद्ध होनेके कारण मारेगये और आर्य दल फिर पराजय को प्राप्त हुआ ॥

अब कोई ऐसा प्रतापी राजा और शूर वीर क्षत्री नहीं रहा जो इन स्वदेश रक्षक योधाओं का सरदार बनता। फिर लोग सोचने लगे और अनुमान से यह विचार किया कि शिवको देश रक्षा के लिये निमन्त्रित करना चाहिये। इस बात पर लोगों ने अपनी प्रसन्नता प्रगट की और दो चार क्षत्री पुत्र कैलाशकी ओर चल दिये। शिव जी समाधी में थे। पार्वती ने देश हितैषी वीरों का स्वागत किया और जब इन लोगों ने यथोचित् प्रतिष्ठा के पश्चात् स्वजाति रक्षा का संदेशा सुनाया तो पार्वती कहने लगी शिवजी समाधी में हैं। मुझे आज्ञा नहीं कि मैं उनको जगासकूं, यह भी पता नहीं कि कब समाधी से उठेंगे। तुम कहते

हो हमारी सेना में अब कोई सरदार नहीं रहा समय भी बड़ा टेढ़ा है, चलो मैं स्वयम् तुम्हारे साथ चलकर शत्रुओं को परास्त कर दूंगी ॥

देवीकी बात सुनकर युवा वीरोंका जी भर आया। बलिष्ठ शत्रूके साथ कोमलांगी स्त्री क्या युद्ध करेगा ! वह थोड़ी देर तक चुप रहे। पश्चात् पार्वती ने उनके अन्तःकरण का भाव समझ कर कहा पुत्रो ! तुम समझते हो कि स्त्री निर्बल होती है वह क्या युद्ध कर सकेगी। यह तुम्हारी अज्ञानता है। जिसके वीर्य्य से तुम्हारी उत्पत्ति है जिसके रज और मांसादि से तुम्हारा शरीर बना है। जिसके दुग्ध से तुम्हारे शरीर का पालन और पोषण हुआ है वह स्त्री ही तो है। संसार में सारा प्रकाश जो तुम देख रहे हो उसका कारण स्त्री ही है। तुम इस

दुर्मति को अपने अन्तःकरण से निकाल डालो "कि स्त्री क्या वीरता कर सकती है"।

॥ दोहा ॥

समर भूमि में तदपि मैं, करों घोर संग्राम।
शत्रुगिरें कटि धरणिपर, फिरनलेहिं रणनाम॥

मैं तुम्हारे साथ दो कारणों से चलती हूं, एक तो यह कि शिव जी महाराज समाधी में हैं दूसरे स्त्री रण में उपस्थित रह कर एक एक बीरसे दस दस योधाओं का काम ले सकती है। अन्य कोई वस्तु उनके हृदय में इतना उत्साह नहीं उत्पन्न कर सकती जितना कि एक माता की आज्ञा या उसका सैन्य कर सक्ता है। तुम मेरे उत्साह का निरादर न करो तुम मुझे अपने साथ ले चलो और तुम देखोगे कि मैं शत्रुओं की सेना को कैसा छिन्न भिन्न करती हूं॥

यक्तवायु चलरही थी। जहां राक्षसों की सेना पड़ी थी, उसके समीप एक रम्य वाटिका में एक नौ यौवना कोमलांगी स्त्री फूल चुनती हुई दिखलाई पड़ी, लोग उसकी स्वभाविक कान्ति पर आश्चर्य की दृष्टि डालते थे। उसका सारा अंग मानों सांचे में ढाला हुआ और ऐसा प्रतीत होता था कि–

जनु बिरञ्चि सब निज निपुणाई।
बिरचि बिश्व कहँ प्रगट दिखाई॥

इसकी कान्ति की शोभा पर आंखें चधौंती थीं, जिसकी उस पर दृष्टि पड़ी वही ठिठक कर रह गया। यह कौन मृगनैनी है जो प्रभात समय निर्भय पुष्पवाटिका में फूल चुन रही है इसको शत्रू तक का भय नहीं है। परन्तु किसीको इतनी सामर्थ्य न थी कि उस तेज मय स्त्री से वातचीत करता उसके सामने जाते हुए लोगों का कलेजा

की आज्ञानुसार रणभूमि में आया और देवी को शस्त्र चलाने की प्रेरणा की परन्तु देवीने उत्तर दिया "मेरा वार कभी निष्फल नहीं होता इसलिए सँभल जा और उसी समय कमर से बँधी हुई लपलपाती खड्ग कृशानु विद्युति ज्योति की भांति निकली और शत्रू का सिर पृथिवी पर लुढ़कता हुआ दिखाई दिया। तत्पश्चात् और शूरवीर भी सामने आये परन्तु देवीने उन सब को रण भूमिमें सुलादियां। जब शुम्भने यह वृत्तांत सुना तो उसको इस नौयोबना स्त्रीकी वीरता और अद्भुत पराक्रम पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने अपने गोत्र सम्बन्धी वीरोंको भेजा। देवीने उनको भी तलवार के घाट पर उतार दिया। प्रत्येक मनुष्य भय औ आश्चर्य से एक दूसरेका मुंह तकता था ईश्वर यह कैसी स्त्री है जो बात की बात में शूर वीरों के

रुधिरसे रण देवी का खप्पर भर देती है। शुम्भके हृदय में क्रोधानल की ज्वाला भड़क उठी, उसने रक्तबीज अपने सेना पति को आज्ञा दी 'तू जा और उसको या तो जीवन से रहित कर या बांधकर मेरे सामने ला मैं देखूं तो वह कौन स्त्री है' यह आज्ञापाकर रक्तवीज भी आया। यह अपने समय के शूरवीरों और योद्धाओं मे अद्वितीय था, इसी की वीरता और पराक्रम से आर्य्य सेना बारम्बार पराजय को प्राप्त होती थी। यह रणभूमि में आ उपस्थित हुआ। थोड़ी देर तक देवी के मुखारविन्द की कांति और सूर्यवत् तेजमय शोभा को अवलोकन करता रहा। फिर स्वयं तलवार खींचली और दोनों ओर से शस्त्र द्वारा प्रश्नोत्तर होने लगे। रक्तवीज ने कभी किसी योधा को ऐसा भयंकर संग्राम करते न देखा था, देवी की

शस्त्र विद्याने उसके दांत हिला दिए उसने अनेक प्रकार से देवीके बध करनेका प्रयत्न कियो परन्तु उस का वार निष्फल होता गया । फिर देवी ने ललकार कर कहा 'दुष्ट अब सँभल जा, देखना चेत करना मेरा वार कभी निष्फल नहीं होता ' रक्तवीज ने अनेक छल कपटसे अपने आप को बचाना चाहा परन्तु देवी ने कड़क कर ऐसा भरपूर हाथ मारा कि उसका सिर गेंद की भांति उछलकर दूर जा पड़ा ॥

शुम्भ की सेना का यह अन्तिम सेनापति था जब शुंभको उसके मरनेकी सूचना मिली तो वह मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, और कहने लगा हाय! जिस रक्तवीज के नाम से समर बिजयी शूरवीर का बक्षस्थल कांप उठता था उसका सिर काटकर एक सुकुमारी स्त्रीने रणदेवी को बलिप्रदान कर

दिया। उसको ऐसे समर बांकुरे वीरके मारे जानेसे जो शोक हुआ वह लेख द्वारा कभी प्रकाशित नहीं होसकता। वह उसी क्षण क्रोधमें अरुण नेत्र किए हुये उठा और अस्त्र शस्त्र धारणकर शीश पर टोप लगा कर कृशानु खड्ग हाथ में धारण किये सुमन वाटिका में देवी के सामने संग्राम करने को आ उपस्थित हुआ। देवी इसी दुष्ट का मार्ग देखती थी उसने पहुंचकर कहा तूने मेरे बड़े २ वीरोंको मारकर रणभूमिमें सुला दिया अब मेरे सामने आ और अपनी वीरता दिखा! देवीने मुसकेराकर उत्तर दिया रे दुष्ट! क्यों चिन्ता करता है, तुझ को भी बातकी बातमें मारकर उन्हीं के पास यमपुरको भेजे देती हूं। तत्पश्चात् दोनोंका जी क्रोधसे भरगया, तलवारें चलने लगीं, लोग चारोंओर खड़े हुए विचित्र संग्राम को अ-

द्भुत लीला देख रहे थे। अनुपम शोभा थी। एक दूसरेको ऐसा प्रश्नोत्तर देता था मानो शस्त्रविद्याके एक २ सूत्रकी व्याख्या करता था। क्रोधसे देवीके नेत्र अरुण होगये उसने गर्जकर कहा रे दुष्ट! अब चेतकर मैं वार करती हूं देखना बचना, बस इतना कहना था कि तलवार शत्रूके मस्तक पर थी परंतु उसकी टोपी लोहेकी थी कट न सकी उलटा देवीकी तलवार के दो खण्ड होगये। देवीने तलवार हाथसे फेंक दिया। उचित था कि उसको दूसरी तलवार दीजाती। परन्तु अन्याई शुम्भने क्रोध में उसको दूसरा शस्त्र लेने का अवसर न दिया और उसके लम्बे केश पकड़कर घुमाने लगा देवीकी जिह्वासे उस समय यह शब्द निकला "शिव! प्राणनाथ शिव" और उसी समय शिव का कठोर त्रिशूल शुम्भके बक्षस्थल को बेधता हुआ

आर पार होगया, वह उसी क्षण पृथ्वी पर तड़प कर गिर पड़ा। देवीने झुककर शिव का चरण पकड़ा और युवक वीरोंने हर्षित होकर अमृतध्वनि करना आरम्भ किया। "पार्वती माताकी जय" शिवजी की जय"

शिवके समयानुकूल आजाने का कारण भी लिखना आवश्यक है। जिस समय पार्वतीने कैलाश को छोड़ा उसके किंचित देर पीछे शिवजी महाराज समाधी से जागे। लोगोंने देवीके चले जानेका कारण उन्हें कह सुनाया। शिवजीने यह सोचा ऐसा नाहो पार्वती के उत्साह का परिणाम हानि कारक और शोकप्रद हो। यह उसी क्षण वहां से चलदिये और खोजते हुए सुमनवाटिका में उसी क्षण पहुंचे जबकि शुम्भ पार्वतीके केश पकड़ कर घुमा रहा था, प्राचीन समय भारतवर्ष में ऐसी देवियां उत्पन्न हुआ करती

थीं, परन्तु शोक मूर्खता ने हमको यहां तक घेर लियो और इस दशाको पहुँचा दिया कि हम अपनी स्त्रियों को इसको अपेक्षा कि उनको स्त्री धर्मका उपदेश दें, उनको पशुओंसे भी बुरी दशामें ला गिराया और उसका फल जो हमको मिल रहाहै वह स्वयम् भोग रहे हैं कहने की क्या आवश्यकता है.

पार्वती तू धन्य थी तूने अपने रहते सहते इस बातको प्रमाणित कर दिखाया कि स्त्रियां केवल अपने घरबार की नहीं किन्तु अपने देश जाति कुलधर्म और राज नीतिकी भी रक्षक हैं केवल यही उदाहरण पार्वती के गुण कर्म स्वभाव और सद आचरणों का यथावत शाक्षी है ॥

* चौईपा *

कर्म धर्म बीरता बड़ाई ।

शील सनेह नीति निपुणाई ॥
नेम नियम त्रिय धर्म अनेका।
जप तप संयम ढाल विवेका ॥

* दोहा *

सद्गुण सद आचरण अरु, सदव्रतसद व्योहार
सद्वाणी सद्कीर्ति कर, सो देवी भण्डार ॥

(२)

* जसमा *

दोहा।

इस नश्वर संसार में, क्यों मन फिरत भुलान
चलनातोहिरहनानहीं, अवशिएकदिनजान ॥
सपने के सम्पत्तिहै, सुख दुख धन परिवार
अचलकीर्तिरहजायगी, करिले हृदयविचार ॥

परउपकार स्वदेशहित, धर्मकीर्ति पर पीर
इनके हिततू लागिके, तृणइव त्यागशरीर ॥

जसमा मोलवा देशकी रहनेवाली थी। यह गोरे रङ्गकी एक सुकुमारी स्त्री थी। उस का सारा अङ्ग मानों सांचे में ढला हुआ था। कमल नेत्र, चन्द्रवत बदन, घुँघराले केश और नखशिख से सारा अङ्ग कोमल सौन्दर्य्य युक्त था। उसके शील स्वभाव ने सारे सहबासियों को मोहित कर रक्खा था। वह सब से प्रेम और प्रीति के साथ मिलती थी। लोगों को आश्चर्य होता था कि एक नीच जाति की स्त्री इतनी विशेष मर्यादा और उच्च उत्साह को कैसे प्राप्त हो सकती है। स्मरण रहे कि मर्यादा और उत्साह की उपमा जो मनुष्यों को दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रतिष्ठित बनाती है, किसी उत्तम कुल पर निर्भर नहीं है। मनुष्य

की वास्तविक मर्य्यादा का सम्भाव प्रायः दुर्भिक्षकों के झोपड़ों में भी दृष्टिगोचर होता है। जहां तक लक्ष्मीके बदले दरिद्रताका अधिकार रहताहै। प्रायःनिर्धनमनुष्यऐसेभीमिलेंगे जो अपने कर्त्तव्यों पर तुले हुए हैं और संसार के अन्याई चाहे उनपर कितने ही अन्याय करें, परन्तु वह पहाड़की भांति अपने कुल धर्म से कभी नहीं हटते॥

* चौपाई *

जे नर गहैं जग सत व्रत धारी।
नीति निपुण कुल गौरव कारी॥
ते सुख दुख सब इक सम जानैं।
कछुक गलानि न जिय महँ आनैं॥
संकट बिपति रहैं जिय मौना।
समझत यह जग बाल खिलौना॥
बसहिं बिपिन यो वास करहिं पुर।
जानैं सदा जगत क्षण भंगुर॥

तुम सुशील और सज्जन बननेकी प्रतिज्ञा करलो जिससे वह तुम्हारे परलोक का एक सुगम मार्ग बन जाय। कोई समय आवेगा जब तुम्हारी चेष्टासे सुशीलता, नम्रता और सुयोग्यताका प्रभाव स्वयं प्रगट होने लगेगा और तम संसार में आपत्ति रूपी कसौटी पर परखे जाने के पश्चात् दिव्य सुवर्ण बन जाओगे ॥

जसमा जातिकी ओड़ शूद्राणी थी वह जातिकी नीच परन्तु उत्साहकी ऊंची थी। धन हीन होने के कारण उसके अङ्ग पर सुंदर बस्त्र न थे परन्तु वह फिर भी रूपकी राशि प्रतीत होती थी, वह बड़ी लज्जावती और गुणवती थी, वह कभी खिल खिलाकर तो हँसती न थी वरन् जब मुसकराती थी। तो उसके अरुण होठों के मध्य में खिली हुई

गुलाब की कलियों की उपमा निःसंदेह जी लुभा लेती थी ॥

जसमा का विवाह त्रीकम, एक सामान्य सुयोग्य मनुष्यके साथ हुआ था। वह अपनी पत्नी के स्वभाव को भली भांति जानता था इस कारण वह उसको बहुत प्यार करता था और उसके साथ अधिक प्रेम रखता था वह तड़ाग की खुदाई के कार्य्य में बड़ा विज्ञ था। अतएव उसे लोग तड़ाग, वापी, और कूपादि खुदवाते समय अवश्य बुलाते थे और जब वह किसी कार्य्य में पर नियत किया जाता था उसके अधिकार में सहस्रों मजूर काम करते थे।

एक समय पाटन का राजा सिद्धराज जैसिंह जब अपना प्रसिद्ध सहस्रलिङ्ग सरोवर खुदवाने लगा, तो उसने मालवा से बहुत मनुष्य काम करने के लिये बुलवाये। उसका

भानजा दूधमल स्वयम् त्रीक्रम को बुलाने गया था, त्रीक्रम राजाका सँदेशा सुनकर अपनी पतिव्रता स्त्री को साथ लिये हुये सहस्त्रों ओड़ों को लेकर पाटन पहुँच गया॥

यहां आने पर सबकी मासिक वृत्ति नियत होगई, और सरोवरके खुदाईका कार्य आरम्भ कर दिया गया। सिद्धराज जैसिंह स्वयं प्रभात समय और सायंकाल तड़ाग की खदाई के कार्य्यको देखने भालने केलिए घोड़े पर सवार होकर जाया करता था। राजा के बैठने के लिये तड़ागके तटपर एक खेमा खड़ा कियागया। वहां वह बैठकर मजूरों के कार्यको देखता भालता था, एक दिन जब वह इधर उधर टहलता था तो उसकी दृष्टि अचानक जसमा पर जापड़ी, जो मिट्टी का टोकरा सिरपर रक्खे हुए मिट्टी उठा २ कर बाहर फेंक रही थी। वह

जसमा के रूप पर मोहित होगया, और अपने मनमें यह विचार करने लगा नीची जाति और यह सुन्दरता ! इस स्त्री को तो किसी राजकुल में जन्म लेना चाहिये था। सुयोग्य और नीची जातिमें कोई विशेषता नहीं है। इसी प्रकार वह देर तक सोचता रहा, और जसमा के चन्द्रवत् मुख पर चकोर की भांति देखता रहा, जब वह उस मार्ग से होकर चलती तो राजाके हृदय पर सांप लोटने लगता, जसमा उस समय केवल अठारह वर्ष की थी राजाके हृदय में महाघोर पाप युक्त कामना उत्पन्न हुई उसने कहा चाहे जो होमैं।इसको महीषी (पटरानी) बनाऊँगा, उसने जसमा को अपने पास बुला भेजा परन्तु उसने आने से अस्वीकार ता प्रगट की सन्ध्या समय राजा बहुत निराश होकर राज सभा की ओर गया,

परन्तु उसका जी बहुत व्याकुल था। रातको उसे नींद न आई, बिछौना पर पड़ा पड़ा करवटें बदलता रहा।

प्रभात समय राजा नियत समयके पहिले सरोवर तट पर आया अभी सब कार्यकर्त्ता नहीं आये थे। त्रीकम और उसकी स्त्री जसमा उपस्थित थे। राजा ने स्त्री पुरुष दोनों को बुलाकर कहा "तुम ओडों में सब के चौधरी हो मैं देखता हूँ तुमको इस कार्य में बड़ा कष्ट होता है, तुम्हारी स्त्री सुकुमारी है और इसका पुत्रभी बहुत छोटा है आज से तुम तड़ाग खुदाई का काम बन्द करो और मेरी सभामें रहा करो वहां मैं तुमको अधिक मासिक दूँगा और तुम्हारी प्रतिष्ठा बढ़ाता रहूंगा, त्रीकम ने हाथ जोड़ कर बिनय किया " पृथ्वी नाथ! हम जातिके ओड़ हैं मजदूरी करना हमारा उद्यम है हम

घास फूस की झोंपड़ी के रहनेवाले राज सभामें रहने योग्य नहीं है, हमको प्रतिदिन कमाना खाना यही अच्छा लगताहै, हमारे ऊपर दया कीजिये, हमको सरोवर पर रहने दीजिये परन्तु पापी राजाके हृदय में कोई और ही बात समाई थी, वह कब इन बातों को मानने लगा।

राजाने जसमा की ओर अवलोकन कर कहा "सुन्दरी तू बड़ी कोमल और सुकुमारी है मजदूरी करने योग्य नहीं है, मिट्टी का टोकरा उठाने से तेरा कोमल हाथ पांव दुखता होगा, तू इस कार्य को त्याग दे राज मन्दिर में आकर रह मैं वहां तेरा महीना बढा दूंगा और कुछ काम काज भी न करना पड़ेगा। यहां दिनको गर्मी रात को सर्दी रहती है राजभवन में तेरे बच्च को अधिक सुख होगा।

भोलीभाली जसमा, जो संसारिक व्यवहारों को इतना नहीं जानती थीं कहनेलगी महाराज। राजगृह में तो रानियां रहती हैं हम वन और ऊषर की रहनेवाली राज भवन के अयोग्य हैं, हम तो घास फूस का घर बनाकर निर्बाह करते हैं, हमारे बाल बच्चे नंगे घूमा करतेहैं वह कैसे राजगृहमें रह सकेंगे, परमात्मा ने हमको ओड़ बंश में उत्पन्न किया है हम उसी में मग्न हैं और स्थान में निवास करनेसे हमको क्लेश होगा। राजाने उसको लोभाने और लालच देनेके अभिप्राय से कहा जसमा तू मजदूरी छोड़कर राजमन्दिर में चली आ वहां मैं स्वयं तेरे और तेरे बच्चे के लिये प्रबन्ध करदूंगा। अच्छे से अच्छा बस्त्र और भोजन तुझको मिलेगा, तेरे पुत्र को भूमि देदूंगा तू अपने पतिको त्याग करदे

मैं तुझको अपनी पटरानी बनाऊंगा।

अब जसम्मा को विदित हुआ कि राजा के मनमें कुछ औरही पाप बसा हुआ है। राजा की बातें उसके हृदय में बाण सी लगीं, उसको क्रोध आगया परन्तु आवेश को रोककर उसने बड़ी वीरता से उत्तर दिया। राजा तुम अपनी प्रजा के पिता समान हो रानी को छोड़ कर देश के सारे स्त्री पुरुष तुमारे पुत्र पुत्री हैं तुमको ऐसा वचन मुंहसे कदापि नहीं निकालनाचाहिये।

पर स्त्री पर कुदृष्टि डालना घोर पापहै मैं तुम्हारेऐश्वर्य और राजमन्दिर पर लात मारतीहूं। मेरा धन हीन पति मेरी दृष्टि में तुमसे अच्छा है। मेरी जान जाती रहे कुछ परवाह नहीं परन्तु मैं आपकी अनुचित बातें सुनने के लिये कदापि उद्यत नहीं हूं मैं अपने प्राण देदूंगी पर धर्म न

दूंगी मुझे संसारिक ऐश्वर्य का कुछ लोभ नहींहै, मेरा पुत्र जीविका निमित्त भूमि नहीं चाहता, मेरापति मेरा स्वामीहै। शास्त्रानुसार मेरा उसका सम्बन्ध हुआ है उसने मेरा पाणिग्रहण किया है, अग्नि देवताने बिवाह समय साक्षी दी थी, वह मेरे शरीर का स्वामी है ईश्वर ने हमको जिस योग्य देखा वैसा पतिदिया, हम अपनी दरिद्रता की अवस्था पर सन्तुष्ट हैं, न हम किसी जीव की हिंसा करते हैं न कोई हमको दुःख देता है नित्यप्रति ईश्वरसे पवित्र और निर्पराधी रहने की प्रार्थना करते हैं। आज जो कुछ आपने कहा सो कहा परन्तु अब ऐसी बात मुंह से कभी मत निकालना॥

जसमा के इन वचनों को सुनकर राजा लज्जित और निराश होकर चलागया, परंतु

राजाकी आंखों में जसमा की सोहनी मूर्ति आठोपहर फिर रही थी उसको अपने पति की भक्ति में दृढ़ और पतिव्रता धर्म पर आरूढ़ देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। लोभी निर्लज्ज और दुष्ट मनुष्यों की भांति वह समझता था कि जसमा ऐसी पतिव्रता स्त्री भी फन्दे में फँस जायगी परन्तु उसका यह विचार मिथ्या था। संसार में ऐसे मनुष्य भी हैं जो धर्म पर तन, मन, धन निवछा-वर करने के लिये उद्यत रहते हैं उनकी दृष्टि में सांसारिक ऐश्वर्य तुच्छ और नाशवान प्रतीत होता है॥

राजा अपने मनमें व्याकुल था, उसके हृदय में जसमा की प्रेमकटारी पार होचुकी थी। अब न उसे रातको नींद आती थी न दिनको चैन आता था। घबरा कर उसने अपने प्रधानको बुलाकर कहा "किसी

प्रकार जसमा को मेरी रानी बनाने का प्रयत्न करा" मन्त्री विद्वान् और नीति कुशल था। वह राजा से अप्रसन्न होकर बोला "महाराजा यह क्या बात है तुमको अपनी प्रतिष्ठा और सन्मान की ओर ध्यान देना चाहिये। राजाके गुण और स्वभाव का प्रभाव प्रजा पर आजाता है। आप जानते हैं, "यथा राजा तथा प्रजा" जैसा राजा होता है वैसीही प्रजा भी होजाती है, यदि आपही अनीति और धर्म विरुद्ध कार्य करेंगे तो प्रजा क्यों न करेगी ? क्या तुम अपनी प्रजाको अधर्म और अपवित्र बनाना चाहते हो ? यदि तुमको बिवाह करना है तो किसी राजपूत कन्या से करो पर स्त्री से यदि बिवाह करोगे तो तुम मर्यादा के ऊँचे शिखर से गिर जाओगे, और सारी प्रजा तुम्हारा अनादर करेगी। सब म्लेक्ष और

अधर्मी राजो में तुम गिनेजाओगे, तुम्हारे पवित्र कुल पर कलंक लग जायगा और तुम संसारमें कलंकित होगे ॥

राजा प्रधानकी बातें सुनकर सहम गया, क्या कहसकता था ! चुप होगया वरन इसकी चर्चा सारे देश में फैल गई। मञ्जुल उसका एक वृद्ध मन्त्री था। लोगोंने उससे कहा "तुम जाकर युवक राजाको समझादो ऐसा नहो कोई कार्य नीति विरुद्ध हो जावे और संसार में राजा निन्दित हो" लोगोंके कहने से वह राजाके पास आया और राजा से कहने लगा "हे राजा सुन यद्यपि तेरी युवावस्था है, परन्तु तू सारे देशका अधिकारी राजा है। सारी प्रजाका तू रक्षक और सहायक है। राजाके बिगड़ने से सारा देश बिगड़ जाता है लोग फिर धर्म और नीति पर कुछ ध्यान नहीं देते। सारे

देश पर आपदा आजाती है. प्रजाको क्लेश होता है। अनावृष्टि और अतिवृष्टिके कारण देशमें काल पड़जाता है। राज्यकी सारी सम्पदा और ऐश्वर्य नष्ट होजाता है" ॥

नौयोवना राजा तो कामसे मदान्ध हो रहा था, उसने कहा "मैं ऊँच नीचका कुछ ध्यान नहीं करता प्राचीन ऋषियों ने वर्ण को गुण कर्म और स्वभावके आधीन रक्खा है जो गुणवाला है वह ऊँचा है जसभा इस योग्य नहीं है कि वह मजूरी करे वह राज मन्दिर में रहने योग्य है। वृद्ध मन्त्रीने कहा गुण कर्म स्वभाव की व्याख्या अवश्य सत्य है और ऐसाही प्राचीन समय में होता था। और होना चाहिये, परन्तु यह तो बताओ परस्त्री से बिवाह संस्कार करने का कौन ऋषि अथवा शास्त्र परामर्श देता है" ॥

राजाने कुछ उत्तर न दिया, प्रधान की

बात बराबर टालता रहा, और जब उसने देखा कि यह कामसे मदान्ध होगया है तो वह त्रीकम के पास आया और स्त्री पुरुष दोनों के परस्पर प्रेमको देखकर प्रसंन्नता पूर्वक कहने लगा "तुम इस तड़ागको शीघ्र खोदकर घर जानेका यत्न करो" सब मजदूर तालाब को शीघ्र खोदने लगे। थोड़े दिनों में कार्य समाप्त होगया और सब अपनी मजदूरी मांगने लगे ॥

राजाने सब मजदूरों को मजदूरी चुकादी परन्तु जसमा और त्रीकमको भरी सभा में उपस्थित होनेको आज्ञा दी, प्रधान को शंका थी कहीं अन्याई राजा त्रीकम पर कोई दोष न लगावे इस हेतु उसने अपने पास से उसको द्रव्य देकर पाटन देश को शीघ्र छोड़ देने को आज्ञादी ॥

अब सब मजदूर तो अपनी मजदूरी

लेकर मालवा की ओर चले गये । केवल त्रीकम के साथ के थोड़े मनुष्य रहगयेथे । आधीरातके समय त्रीकम अपनी स्त्री पुत्र और मित्रों के सहित शीघ्र वहांसे भाग निकला राजाके दूत उसको प्रतिक्षण सूचना देते थे। जिस समय उसने सुना कि चिड़िया पिंजरे से भाग निकली तो वह बहुत व्याकुल हुआ। और प्रातःकाल उसने कुछ सवारों को लेकर पीछा किया। और कई मील की दूरी पर जाकर उनको घेर लिया मजूरों ने उसी क्षण जसमा और उसके बच्चेको बीच में कर लिया और राजासे कहने लगे "तुम को एक मजूर की स्त्री पर कुदृष्टि डालना मुनासिब नहीं है" त्रीकम जिसके हृदय में पहिलेही से क्रोधको ज्वाला भड़क रही थी राजाको अपशब्द कहने लगा। राजा भी क्रोधमें आगया और उसके सवारों ने उनको

पहिले से सिखाया गया था, त्रीकमको सिर उसी क्षण काट दिया। मजदूरों ने भी अपने कृपाण से युद्ध करना प्रारम्भ करदिया, मार काट होने लगी। जब सब मजदूर मरगये तो राजा जसमा की ओर झुका। जसमाके पास कटार थी। उसने कमरसे कटार खींच कर कहा "पापी चाण्डाल! अभागा राक्षस जा तेरे तालाव में कभी पानी न रहेगा" यह कहकर अपने कलेजे में कटार भोंक लिया। आंतें बाहर निकल पड़ीं और वह पृथ्वी पर गिरपड़ी। राजा उसी क्षण उसकी ओर झुक कर देखने लगा कि कहीं बहुत घायल तो नहीं होगई। दूसरे क्षण मरती हुई स्त्री की कटार उसके हृदय से निकल कर राजा के कलेजे में घुसगई और वह भी वहीं यमलोक को चलागया॥

लोग कहते हैं सहस्त्रलिंग सरोवर, कभी

पानी से नहीं भरा। अब तक वह सूखा पड़ा है। पाटन देश भी धूरीमें मिल गया उसको नाम तक लोग कम जानते हैं, और जो लोग राजा सिद्धराज का नाम सुनते हैं उस को थूकते और धिक्कारते हैं॥

जसमा तू धन्य थी। तेरा पतिव्रत धर्म धन्य था तू मरी नहीं जीती है। तेरी मृत्यु नहीं हुई वरन तू जीवितहै, सती ! तेरा ऐसा साहस फिर हमारी स्त्रियों में उत्पन्न हो।

(३)

कमला

दोहा

सती विरहनी पीवकी, जोगन धरिया भेष।
बाना पहिने प्रेमका, पहुंची प्रीतम देश॥

जगत् समुन्दर मोहजल, सतगुरु खेवनहार।
शब्द नाव पर चढ़चली, पहुंची पियाकेद्वार

कमला जगन्नाथ भट्टाचार्य की पतिव्रता स्त्री थी। यह मुर्शिदाबाद प्रान्त के किसी ग्राममें रहती थी। जैसा उसका नाम था वैसेही उसके गुण थे, कमल दल में इतनी कोमलता कहां जो कमला के कोमल अंगों में थी। जितनी ही वह रूपवती थी उतनी ही गुणवती थी। जो उसकी भोली भाली मूर्ति को देखता था लट्टू होजाता था। अपने ग्राममें वह देवी कहलाती थी, और लोग उसको शांतचित्त और धर्मात्मा प्रतीत करते थे॥

किसी समय जगन्नाथ का कुल सब से धनाढ्य और प्रतिष्ठित माना जाता था। राजा मानसिंह अकबर के वजीर और

बंगाल के सूबेदार ने उनको बहुत कुछ भूमि जीविका निमित्त दे रक्खी थी, जो कई पीढ़ीसे उनके अधिकारमें थी, जगन्नाथ को भी खाने पीने की कुछ कमी न थी, और निश्चिन्तता से आयु व्यतीत करता था, उसका घर अतिथों और पाहुने से सदैव भरा रहता था। जब कोई उसके समीप किसी कार्य में सहायता के हेतु आता तो कमला उसकी बात चित्त लगाकर सुनती और यथा शक्ति उसकी सहायता करतीथी।

समयानुकूल कमला से तीन सुकुमार पुत्र उत्पन्न हुए। एक बारह वर्ष का था, दो अभी छोटे २ थे। माता पिता आनन्द से दिन काटते थे। जब महीनेमें भरपूर द्रव्य मिलता हो, सहवासियों में अधिक प्रतिष्ठा हो, और घरके आंगन में खेलने वाले बच्चे कूदते फांदते दिखाई दें, फिर इससे

अधिक और क्या आनन्द हो सकता है, स्त्री पुरुष दोनों सुशील धर्मात्मा और सज्जन थे। और आनन्द पूर्वक आयु व्यतीत करते थे॥

उस समय बंगाल में कम्पिनी का राज्य था, वर्तमान राज्य प्रबन्ध का कहीं नाम न था। राजकरने वाले बनियें सौदागर थे। उनको अपने लाभ से काम था। नोच खसोट जहां से पाते थे रुपया घसींटते थे। पैसा कौड़ी लेने में किसी दुखिया धनहीन को भी नहीं छोड़ते थे। अंगरेज बेचारों का तो कहनाही क्या। वहां तक तो लोगोंकी पहुंच भी न थी, परन्तु हिन्दुस्तानी नौकर वह ऊधममचाते थे, कि बसरे बस उनमें गंगागोविन्द सिंह सबका सरदार था जिसकी दुष्टता और निर्दयता की कहानियां सुनकर अब तक बङ्गाल प्रान्त निवासी

कांप उठते हैं। राज्य आय के अतिरिक्त उस दुष्टने उन गावों पर भी जिसको बादशाहने मन्दिरादि के निमित्त दान देदिया था, महसूल लगा रक्खा था। वह कहनेको हिन्दू था परन्तु उसके नास्तिक आचरणों को देखकर लोगों को आश्चर्य होता थो कि हिन्दू कुलमें जन्म लेकर कोई मनुष्य कैसे इन नीच और निन्दित कामों को कर सकता है! और वह भी स्वजाति, स्वदेश और स्वबन्धु बर्गों के साथ हाय! हिन्दुओं का धर्म कुछ आज से नहीं परंच कई बर्षों से सत्यानाश हो रहा है। इन में अपने देश जाति और भाइयों का प्रेम नहीं, धर्म को बच्चे की लँगोटी समझते हैं। सांसारिक सुख और इन्द्रियों के क्षणभंगुर और नीच कामनाओं के पूर्ण करने के लिए ऐसा अधर्म और नीति बिरुद्ध कार्यकर बैठते हैं,

जिससे सज्जन और बुद्धिमान मनुष्य घृणा करते हैं। इसप्रकार के दुष्ट चाण्डाल और अधर्मी हिन्दू हम में अब भी वर्तमान हैं, संसार में और जातियां भी विशेष हैं जो आपत्तिके समय भी अपने देश और स्व-जातीय स्वतन्त्रता को हाथ से जाने नहीं देते अपने देशकी विधवा स्त्रियों और बच्चों का ध्यान रखते हैं। परन्तु हिन्दू इन बातों को त्याग कर दूसरे अन्य देश निवासियों से मिलकर अपनी ही जाति को हानि पहुंचा रहे हैं। अपने देशकी भलाई पर लेशमात्र ध्यान नहीं देते और इसप्रकार स्वजातियों में पतित होरहे हैं। गङ्गागोबिन्द सिंह भी ऐसाही था॥

बंगालमें तीन वर्षका अकाल पड़ा, अना-वृष्टिके कारण कृषीको हानि पहुंची। बहुधा ग्रामों में खेतके खेत टीड्डियों ने नाशकर

दिया अन्न बिना देश दुखी होगया, अब तो सरकार की कृपा से कारबार भी खुल जाता है उस समय सड़कों पर गलियों में वृक्षों के नीचे सैकड़ों मनुष्य भूखों के मारे मर जाते थे। कोई किसी का पूछने वाला नहीं था॥

धनहीन मनुष्यों की तो योंही दुर्दशा हो रही थी कुछ दिनों पीछे मध्य श्रेणीके लोगों की भी वही दशा होगई सबके धन धान्य सोना चांदी गौ बैलादि कौड़ियों के मोल बिकने लगे। सारे देश में आपत्ति आगई, इस दशामें सरकारी लगानका मिलना दुर्लभ था परन्तु गोबिन्दसिंह को इसका क्या सोच था, वह तो नादिरशाह को परपोता बनकर आया था वह स्त्रियों के नाक की बेसर तक उतरवा लेता था। उसकी दुष्टता

जब मनुष्य पर चारों ओर से आपत्ति आ-
जाती है तो उसका प्राण देने के अतिरिक्त
और क्या सूझता है। इसने भी एक दिन
अफीम लाकर खाली और सो रहा और
फ़िर उस मृत्युनिद्रा से नहीं जागा॥

कमला पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा।
यह अभागिनी इतना दुःख कब सहसकती
थी। एक ओर बच्चों का मुँह देखती थी।
पिताने नन्हें बच्चों का भी सोच नहीं किया
क्या माता भी उनको इस दशामें छोड़ जाय?
नहीं मातृ स्नेह ने उसी समय न्याय कर
दिया कि कुछ दिन पर्यन्त इस छोटे२ अन-
जान बालकों के लिए संसार में रहकर
अपनी आयु व्यतीत करें। उसने कहा प्राण
नाथ! इतनी कठोरता छोटे छोटे अबोध
बालक किसका आश्रय लेंगे। अच्छा आप

जाइये मैं भी मातृ धर्मको यथावत् निर्वाह कर पीछे आती हूं ॥

कमलाने अपने मनमें यह बात ठानली परन्तु हिन्दू स्त्री को पति बिहीन आयु व्यतती करना कितने बड़े शोक और दुःखकी बात है। वह बेचारी बिलखर कर सिर पीटर कर रोने लगी । हा नाथ ! प्राण नाथ !! तुम हमें अकेली छोड़कर कहां चलेगये । छोटेर बालक तुम्हारी राह देख रहे हैं । हाय क्या अब मैं तुमको फिर न देखूंगी ॥

* दोहा *

बिछुड़ै ऐसा मित्र जब, कैसे आवै चैन ।
कीन्ह बिदापर रैन दिन, टपर टपकतनैन ॥

पतिके मृतक शरीर का किसी प्रकार मृतक संस्कार कियागया और बेचारी

बच्चों सहित बिरह सागर में पड़कर कष्ट और दुःख सहने लगी ॥

एक दिन बड़ा पुत्र केशवनाथ माता से कहने लगा "माता! पिता प्रायः कहाकरते थे कि यदि किसी प्रकार देहली जाकर बादशाहकी सेवा में निवेदन पत्र दिया जायतो हमारी जीविका पुनः हाथ आजायगी। मैं तो अब दिल्ली जाऊंगा तुम छोटे भाइयों की रक्षा करना, माताने उत्तर दिया "बेटे" समय कुसमय है देशमें सूखा पड़ा है कोई किसी का साथ नहीं देता, फिर तू बारहवर्ष का बालक है तेरी वहां कौन सुनेगा, केशवनाथ उस समय तो चुप चाप होगया, परन्तु आधा रातके समय जब माता सो गई तो चुपके से उठा, न इसके पास कुछ राह का खर्च था न पहनने औढ़ने के कपड़े थे. आर

किवाड़ खोलकर घरसे चलदिये और अ-
पनी धुनिमें दिल्ली की ओर चल निकला।

सूर्य्य उदय हुआ बेचारी माता पर एक
और दुःख का तारा टूट पड़ा पतिका तो
स्वर्गबास होही गया था। पुत्र भी हाथ से
चलागया एक तो दरिद्रता दूसरे अकाल ती-
सेर लड़का भी हाथ से जाता रहा। सत्यहै
जब समय बिपरीति होजाता तो चारों ओर
से दुःख और आपत्ति आघेरती है। इसने
भी चाहा कि पतिकी भांति अपना प्राण
तजदें परन्तु आयुके दिन पूरे न होने और
अबोध बालकों के मोह और स्नेहने उसको
रोक दिया। दो चार दिन पीछे दाना पानी
न मिलने से उसके गोद के दोनों बालक
चल बसे॥

दुःख मनष्य के कोमल हृदयको बज्र के
तुल्य कठोर बनो देत है। लज्जा भी उसी

समय जाती रहती है। हतभागिनी कमला ने दोनों बच्चों के मृतक शरीरों को झोलीमें डाल कर कन्धे से लटका लिया। इसके पास दो लपलपाते हुए छुरेथे। एकको उसने जूड़े में छिपा लिया दूसरे को हाथ में ले लिया और घरसे बाहर निकल आई। पांव में चलने की सामर्थ न थी। सारा अङ्ग निर्बलता से कांप रहा था। शरीरको ऊपरी भाग खुला हुआ था, केवल कमर मे एक चिथड़ा लिपटा हुआ था, वह मैली कुचैली घरसे बाहर निकली और गङ्गा गोविंद सिंह की बैठक में पहुंचकर उसने कहा "दुष्ट" चाण्डाल, हत्यारे पापी! यह बच्चे तेरेही अधर्म से मरे हैं यह कहकर उसने दोनों मृतक बच्चों को उसके सामने रखदिया और आप छुरी लेकर गंगागोबिंदसिंह पर झपटीं परन्तु निर्बल भूखी स्त्री में इतनी शक्तिकहां

कि उसको मारकर देशको उस अधर्मी से बचाती । गंगा गोबिंदसिंह को आश्चर्य हुआ लोगोंने कहा" यह जगन्नाथकी स्त्री है छुरी उसके हाथसे छीन लीगई परन्तु उसने एक सिपाही को घायल करही दिया, अब बेचारी को घर जाते हुए बड़ा शोक होता था। वह नगर की गलियोंमें पागल की तरह घूमने लगी केश खुले हुए तन पर फटा सा चिथड़ा लपेटे जिसने उसकी यह दशा देखी बड़ा शोक किया बहुतेरों ने उस के दुःख में सहायता करनी चाही परन्तु अब वह सांसारिक सहायता से क्या लाभ उठा सकती थी। उसका अंग क्षीण और मैला कचैला हो गया था। परन्तु उसके मुख की कांति कञ्चनकी भांति दमक रही थी। जो उसके सौन्दर्य को देखता था उस को क्लेश होता था॥

गंगागोबिंदसिंह के नीचे एक मनुष्य देवीसिंह भी था जो उस समय के दुष्ट और कुकर्मी मनुष्यों में बड़ा प्रसिद्ध था। सहस्रों बड़े घरानों की बहू बेटियों का धर्म्म उसने सत्यानाश करदिया था। उसके सेवक इस ताक में लगे रहते थे कि वहां कोई सुन्दरी रूपवती स्त्री हाथ लग जाय तो देवीसिंह के चित्तको प्रसन्न करें। बेचारी कमला बड़ी सुन्दर थी लाखों में एक थी देवीसिंह के सेवक उस देशकी भाषा नहीं जानते थे और कमलाकी सतकीर्तिकी भनक उनके कान तक नहीं पहुँची थी। उन दुष्टों ने उसे घेरकर पकड़ लिया। कमला पकड़ लीगई और उसे कपड़े लत्ते पहिनाकर एक घरमें रहने की आज्ञा दीगई। देवीसिंह ने उसको देखा और उसके अलौकिक रूप पर मोहित होगया॥

कमला कई दिनसे इस घरमें बन्द थी, कई बार उसने प्राण तज देने का विचार किया परन्तु केशवनाथ के प्रेम ने उसको रोक दिया ॥

स्त्रियां उसको प्रतिदिन समझाती थीं। वह बेचारी चुपके से सुन लेती थी थोड़ेदिनों पीछे उसको ज्ञात हुआ कि देवीसिंह उसपर कुदृष्टि डालता है। हृदयमें तो आग लगगई परन्तु करती क्या। बश क्या था ईश्वर पर विश्वास कर समय देखने लगा ॥

एक दिन कुटिल स्त्रियों ने उसे समझा बुझाकर देवीसिंहके घर भेजना चाहा। वह कब जानेवाली थी। एक बलवान मनुष्य उसके लाने के लिये भेजागया, जब उसने पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाया तो कमला ने अपने जूड़ेसे छुरी निकालकर उसके कलेजे

में भोंक दी । कपड़ा बहुत मोटा था उस का जाव तो बचगया परन्तु उस दिनसे फिर किसी पुरुष को उसके निकट आनेका साहस न हुआ और देवीसिंहने भी किसी मनुष्य को उस दिनसे फिर नहीं भेजा परन्तु उस को निश्चय था कि जब उसका चित्त ठिकाने होगा तो वह बशमें आजायगी । कमला एक मास पर्य्यन्त मुर्शिदाबाद में बंद रही फिर देवीसिंह ने दो चतुर स्त्रियों द्वारा उसको पुरनियां भेजदिया वह जाती नहीं थी । दुष्टों ने उसके हाथ बांध दिये और इस प्रकार वहां भेजदिया ॥

कमलाने सारे दुःखों और आपत्तियोंको सामना किया परन्तु देवीसिंह या उसके आधीन मनुष्यों को उसके धर्म नष्ट करने का साहस नहीं हुआ। सचहै पतिव्रता स्त्री के सतीत्व धर्मको कौन नाश करसकता है,

संसार मे कोई पदार्थ ऐसा नही जो उसका तप भंग करसके घेचारी डेढ़ वर्ष तक इन दुष्टों के फंदे में पड़ी रहो। वह नियत समय पर भोजन करती थी और प्रत्येक समय शत्रू की चिन्ता में रहती थी ॥

इसके दृढ़ पतिव्रत को देखकर देवीसिंह के एक जमादार का मन पसीजा, इसका नाम लक्ष्मणसिंह था। वह मनुष्य कंगाल दुखिया और लूले लँगड़ों को सताते है स्मरण रक्खें कोई दिन ऐसा आता है, कि उनके ही घरों में से ऐसे धर्मात्मा, सज्जन, और हितैषी पुरुष उत्पन्न होजाते हैं जो बाप भाई और स्वामीको धोखा देकर सत्य मार्ग पर चलने को कटिबद्ध होजातेहैं। यह आश्चर्य की बात नहीं है परंच परमात्मा का नियम है। संसार में जितनी आपत्ति आतीहै वह एक प्रकार की परीक्षा है, जब

मनुष्य इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाताहै तो ईश्वर स्वयम् उसका बेड़ा पार करता है और कोई ऐसा ईश्वर भक्त नीति कुशल और धर्मात्मा उत्पन्न हो जाताहै जो असहाय और दुखी मनुष्यों का दुःख दूर कर देता है।

दोहा।

होत कृपा जब ईशकी ठाढ़ होत है आय।
कोई दई का लाल इक, दुखमें करत सहाय

लक्ष्मण सिंह सज्जन और ईश्वर भक्त था। उसने देखा कि देवीसिंहने एक सती स्त्री को कुदृष्टि से अवलोकन करने के लिये बन्दी में डाल रक्खा है उसका जी भरआयो और उसने एक दिन अवसर पाकर कमला से कहा "माता! क्या तू अपनी व्यवस्था मुझसे कह सकती है?" माता शब्द सुनते ही कमला की आंखों से आंसू की धारा

यहने लगी दो बच्चे माता कहने वाले तो चल बसे। एक दिल्ली चलागया। यह कौन मनुष्य है जो माता कहकर पुकार रहा है। उसके जी को धैर्य बँधा संसार पवित्र आत्माओं से शून्य नहीं है। कमलाने प्रेममय शब्द से कहा "बेटा! मैं तुझ से क्या कहूं। दो बालक और पति गंगागोविन्द सिंह के अधर्म से मरगये। जो कुछ पंजी थी वह भी जाती रही एक पुत्र दिल्ली भाग गया अब दुष्ट मेरा तप भंग करने पर उद्यत है मुझको केशवनाथ के देखने की अभिलाषा ने अब तक संसार में जीवित रक्खा है। परन्तु अब मैं अत्यन्त दुख सह रही हूं। क्या करूं कुछ वश नहीं चलता॥

लक्ष्मणसिंह ने कहा "आज से तू मुझ को अपनी कोख का बेटा समझ। देवीसिंह ने सहस्रों अच्छे घरों का नाश करदिया है

परन्तु हे माता ! तू धैर्य्य से कोमले। आज मैं इस घरको अपना मातृ स्थान समझता हूं। जब तक मैं उस अन्याई के रुधिर से खड्ग की प्यास न बुझालूं तू मेरे घर में चल कर बास कर। तेरे पवित्र चरणों के प्रताप से मेरा घर "मातृ तीर्थ" बन जायगा। हम सब लोग तेरी सेवा करेंगे और तू अपना दुःख भूलजायगी। इन वाक्यों से कमला को धैर्य हुआ। जानमें जान आई कि संसार में कोई ऐसा मनुष्य भी है जो उसकी रक्षा करेगा।

कुछ दिनों पीछे अवसर पाकर लक्ष्मण सिंहने कमला को अँधियारी रात में अपने भाई रामसिंह के पास दीनाजपुर में भेज दिया। रामसिंह के हृदय में लक्ष्मणसिंहकी अपेक्षा अधिक प्रेम था। वह छोटा बालक था। वह आकर उसके पांव चूमता और

माता माता कहकर गले से लिपट जाया करता। कमला सचमुच उसको अपने कोख का बेटा समझती थी और यहां उसके दिन आनन्द पूर्वक व्यतीत होते थे।

कमला के भागने का समाचार ऐसा नहीं था जो छिपसकता। देवीसिंहके सेवक उसको खोजने लगे और जब रामसिंह को ज्ञात हुआ कि देवीसिंह यहां भी दुःख देगा तो वह एक घोर वन में कमला को साथ लेकर चला आया और वहां वह रहकर ईश्वर का भजन करने लगे॥

यहां कमला और रामसिंह प्रतिक्षण ईश्वर के ध्यान में लीन रहते थे रामसिंह वन से फल फूल पत्ते तोड़ लाता वही उन का अहार था और वे उसी में प्रसन्न थे कमला ने एक दिन कहा "पुत्र! मैं तेरा यश जीवन पर्यन्त नहीं भूल सकती। इस ऋण

से क्या मैं कभी ऋण मोचन होसकती हूं, रामसिंह बोला माता ! को ऐसे वाक्य पुत्रों के सन्मुख कभी उच्चारण नहीं करना चाहिए तुमको समझना चाहिये कि लक्ष्मण सिंह और रामसिंह तेरे वह पुत्रहैं जिनको भगवान ने तेरी गोद से छीन लिया था अब तुझको इस अवस्था में आ मिले हैं, केशवनाथ जीवित है कभी न कभी अवश्य आवेगा कमला ने रामसिंह को गोदमें बिठा लिया, आंखों से प्रेमके आंसू बहने लगे और वह वास्तव में भूलगई कि रामसिंह किसी दूसरेकापुत्रहै।

परमात्मा ! तू धन्य है। प्रभो ! तेरी महिमा कोई वर्णन नहीं करसकता ! बनमें इसीप्रकार कई मास व्यतीत होगये । एक दिन प्रातःकाल जब रामसिंह फल फूल लेने गया था, कमला केशवनाथ का स्मरणकरती हुई परमात्मा की अपार दयाको धन्यवाद

देती हुई उसका गुण गाने लगी वह प्रेम में मग्न थी और प्रिय स्वर से भजन गारही थी। जिसका भावार्थ कबीर के निम्नलिखित दोहो के अनुकूल था॥

❀ दोहा ❀

विनय करूं करजोरि के, सुनिये कृपा निधान।
भक्ति भाव मोहिं दीजिये, दया गरीबीदान॥१॥
सुरत करो मेरी साइयां, हमहैं भव जल मांह।
आपैही बह जांयगे, जो नहिं पकड़ो बांह॥२॥
मैं अपराधिनजन्मकी, नखशिख भराबिकार।
तुम दाता दुख भञ्जना, मेरी करो उबार॥३॥
औगुन किये तों बहु किये, करत न लागीबार।
भावे वन्दा बख शिये, भावे गरदन मार॥४॥
भवसागर अति कठिन है उठती लहर हजार।
जबलग दया न होतेरी, क्योंकोई उतरे पार॥५॥
तुमही मेरे साइयां, तुम लग मेरी दौर।
जैसे काग जहाज को सूझै औरन ठौर॥६॥

क्या मुखसे बिनती करूं, मनमें प्रेम न भाव।
नर देही निश्फल गई, मिले न फिर असदाव७
कबीर भूल बिगाड़िया, नाकर मैला चित्त।
साहिब गरुआ चाहिये, नफर बिगाड़े नित्त।
साहिब तुमयत भूलियो, गहिकर पकड़ोबांह।
हमसे तुमरे बहुत हैं, तुम सम हमरे नाहिं ॥९॥

एक प्रहर व्यतीत हुआ दुसरा भी व्यतीत हुआ, तीसरे का भी अन्त हुआ चाहता है। रामसिंहको उसदिन अधिक बिलम्ब हुआ, परन्तु कमलाको उसका ध्यान तक नहीं हुआ, क्योंकि वह तन मनसे ईश्वर के चरणों में लीन हो रही थी॥

उसको लेशमात्र ध्यान न था कि रामसिंह को आज क्यों इतनी देर हुई है। इसको आंखों से आंसूकी धरा प्रवाहित थी। चित्त प्रेममें मग्न होरहा था, और वह स्थिरचित्त होकर सावधानी से ईश्वर को ध्यान कररही थी॥

अन्त में उसने आंख उठाकर देखा। सन्मुख दो बालक दौड़ते चले आरहे थे। क्षणमात्र में दोनों उसके निकट आगये। एकने कहा माता ले केशवनाथ आगया दूसरे ने कहा "माता! मैं तेरा अपराधी पुत्र केशवनाथ हूँ" कमला ने दोनों बच्चों को पकड़कर गोदमें बिठालिया। उसकी छातीसे उसीक्षण दूधकी धार बहचली। प्रेम और हर्षसे उसके मुँहसे वाक्य नही निकल ते थे वह कभी एकको कभी दूसरे को चूमती थी। इनमें से एक रामसिह दूसरा केशवनाथ था। एक जातिका हिन्दू क्षत्री और दूसरा बङ्गाली ब्राह्मण था, परन्तु कमला प्रेम सागर में डूबी हुई थी, वह दोनों के कोमल मुखों का चुम्बन करती और क्षण २ प्यार से गले लगाती थी॥

इसके पहिले कि हम कमलाके चरित्र को पूर्ण करें पाठकों को इतना बता देनेकी आवश्यकता ज्ञात होती है कि लक्ष्मणसिंह इधर उधर केशवनाथ की खोज करा रहा था। उसको पाकर उसने अपने भाई राम सिंहके ठिकाना से दीनाजपुर भेज दिया। दीनाजपुर से खोजलगा कि रामसिंह कमला को लेकर बनमें एक पर्णशाला में रहता है। केशवनाथ माताकी खोजमें इधर आ निकला रामसिंहसे राहमें भेट होगई। दोनों परस्पर देर तक बात चीत करते रहे रामसिंह किसी को कमलाका परिचय बताना नहीं चाहता था इसी कारण देर हुई जब उसको भली भांति निश्चय होगया कि यह कमला का पुत्र है तो वह उससे मिलकर प्रसन्न हुआ और शीघ्र दोनों दौड़ते हुए आकर माताकी गोद से चिपट गये॥

कमला पुत्र से मिलकर बड़ी प्रसन्न हुई। अब उसको किसी का भय नहीं था और वह आनन्द पूर्वक दीनाज पुरमें रहने लगी लक्ष्मणसिंह और रामसिंह दोनो उसको माताकी भांति जानते थे। और कितने दिनो तक उसकी सेवा करते रहे॥

जो लोग सत्यमार्ग पर चलने का प्रयत्न करते हैं। ईश्वर उनकी सहायता करता है, और आपत्ति समय के पीछे उनका कार्य्य सफलता को प्राप्त होता है॥

४

नील देवी।

दोहा

बिरह समुन्दर ताप जल, सूझे आर न पार।
प्रेम नावपर बैठकर, पहुँची पिय दरबार॥

भव वारिधि के भँवर में, बूड़त थी मँझधार।
सतगुरु पार लगाइयां, बिन डांड़ो पतवार॥

नीलदेवी पाञ्चाल देशके राजा सूर्य्य देव की रानी थी बड़ी सुन्दरी और कोमलाङ्गी थी, पतिकी सेवा को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानती थी। रानी होने पर भी वह साधारण रीतिसे रहती थी, और पति गृह सम्बन्धी अथवा राज सम्बन्धी कार्य्यों में कम हस्तक्षेप करती थी। राजा और रानी दोनों में परस्पर बड़ा प्रेम था और दोनों सुख पूर्वक राज्य सुख भोगते थे॥

दैव संयोग्य से थोड़े दिनों में ऐसा कुसमय आगया कि उन पर आपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा और उसने उन दोनों को परास्त करदियो

अब्दुल शरीफखां सूर दिल्ली का सेना पति बहुत दिनों से इस घात में लग रहा था कि किसी प्रकार उस राजपूत शूरवीर

की स्वतन्त्रता का नाश करदे । और उसके राज्य सम्बन्धी देशों को शाहीराज्य धानी में मिला दे परन्तु सूर्य्यदेव और उसके क्षत्री वीरों के सामने उसकी दाल न गलती थी। कई बार रणक्षेत्र में उसका पराजय हुआ। कई वेर उसको क्षत्री सेनाके आगे पीठ दिखाना पड़ी। परन्तु शाहीराज्य में मनुष्यों की न्यूनता तो थी ही नहीं वह सदैव दृढ़ता से लड़ता भिड़ता रहा। और प्रतिक्षण उन के दुःख देने का उपाय सोचा करता था। उनने अपने सैनिकों से कई वेर कहा कि तुम लोग सूर्य्यदेव से युद्ध करने की आशा छोड़ कर उसको किसी छल कपट के फन्दे में फांस लो। सन्मुख युद्ध में तुम्हारा जय होना असम्भव प्रतीत होता है॥

सेनापतिके निकट कईएक सैनिककट्टरमुसल मान और अपने मत के दृढ़ धर्म्मशाली

खड़े थे वह उसके हां में हां मिलाते रहते थे और "मुसलमानी धर्म्म प्रचार करने की धनि में सारी सेना को "हिन्दूराजों के प्रतिकूल उकसाया करते थे ॥

अन्त समय अब्दुलशरीफ ने दिल्ली से अन-गिनती सेना मगाकर सूर्य्यदेव के घेरने का यथावत प्रवन्ध किया, सूर्य्यदेव एक सामा न्यदेशका राजा था । हिन्दुओं को उस समय भी स्वजातीय उन्नति और स्वदेशीय स्वतन्त्रता का कुछ ध्यान था । ब्राह्मण वैश्य और शूद्रों को देश रक्षा के लिये शस्त्र ग्रहण करने की बड़ी शपथ थी । केवल दो चार सहस्र राजपूत शेष रह गये थे जो सूर्य्यदेव के पताका की छाया में रहकर लड़ते थे, परन्तु उसमें से एकर अपने देशके लिये जीव अर्पण करनेको तत्पर था, और अपने स्वामी के साथ रणक्षेत्र में तृणवत प्राण देनेको उद्यत थे ।

जब सूर्यदेवने सुना कि दिल्ली से घटा टोप सेना आरही है तो उसने राजपूतों की एक सभा की और सबसे "प्रिय मित्र बर्गों ! अब क्या परामर्श करते हो मुसल मानोंने बड़ा अन्याय मचा रक्खा है –" राजपूत बोले' जब तक शरीर में प्राण है हम कभी उसके अधिकार में नहीं रहेंगे न तो सहज में उनके हाथ आवेंगे हमारेसाथ ईश्वर है आप धैर्य से काम लें जिसने क्ष- त्राणी का दुग्ध पान कियाहै वह रणमें कभी पीठ नहीं दिखा सकता। जय और पराजय तो ईश्वराधीन है, इस पर हमारा कुछ बश नहीं है ॥

राजाने कहा "धन्य हो ! वीर पुरुषो धन्य हो तुम्हारा उत्साह । हमारी सेना यदि गणना में न्यून है तो भी शत्रुओं के छिन्न भिन्न करने को बहुत है। एक सिंह-

राज सहस्त्रों शृगालों को भगा सकताहै यदि तुम वीरतासे संग्राम करोगे तो शत्रु रणभूमि से पीठ दिखाकर भाग जांयगे ॥

नीलदेवी सूर्यकी रानी वहां उपस्थित थी। उसने कहा "आप महानुभावों की वीरतामें कोई सन्देह नहीं है परन्तु मुसलमानों का युद्ध प्रायः माया सम्पन्न होता है इसी कारण कुछ भय है।" सूर्यदेवने उत्तर दिया "धोखाधड़ी और माया से शत्रू के साथ संग्राम करना कायरों का कामहै। आर्य्या बंशके क्षत्री मायासे कार्य सिद्ध नहीं करते, वह सोतेहुए सिंह पर कभी शस्त्र नहीं चलाते जब तक उसको निद्रासे जाग्रत अवस्था में नहीं करलेते। हम कभी उन पर हाथ नहीं चलाते जो शस्त्र रहित हैं। हम सन्मुख संग्राम करते हैं और निज बाहुबल से शत्रूको परास्त करदेते हैं। यदि प्राणान्त होजायगा

तन्त्र थे इस बात का ध्यान भी नहीं करते थे कि शत्रू ऐसे अधर्म्म काम करते हैं कि उन पर अनजाने में कोई आक्रमण करेगा इस बातने भारत देश को बड़ी दुर्घटना में डाल दिया वह निद्रा के बशीभूत होगए ॥

अर्द्धरात्री के समय जब सब लोग निश्चिन्तता से सो रहे थे। अब्दुलशरीफने सोते हुए राजपूतों पर आक्रमण किया। रक्षकों को इक्षुदण्ड की भाँति काट गिराया चारों ओर से मार काट की ध्वनि होने लगी। वारों के सिर धड़ से अलग खटाखट गिरने लगे। तलवारें विजुली की भांति चमकने लगीं। रणक्षेत्र में रुधिर की नदी बह निकली अब्दुलशराफ ने सूर्यदेव को बांध लेने के लिये पहिलेही से मनुष्यों को नियतकर रक्खा था दिल्ली का बादशाह बीर पुरुषों

का बड़ा सन्मान करता था। वह जानता था कि यदि सूर्यदेव सा वीर, परम उत्साही और संग्राम विजयी मनुष्य हाथ आजायगा तो फिर उसकी सहायता से समीपवर्ती राज्यों का विजय करना बाल खिलौना हो जायगा इसीकारण अब्दुलशरीफ ने अपनी सेना के महान वीरों को राजाके बांध लेने के लिये आज्ञादे रक्खी थी, मुसलमान राजा के खेमे मे जा पहुंचे। वह इस अचानक कोलाहल से चौंक पड़ा। खड्ग हाथ में ग्रहण कर आक्रमण करनेवालों का प्रति उत्तर देने लगा। पश्चात् उनके फन्दे में आकर एक कठहरे में जिसमें लोहे के छड़ लगे थे बन्द करदिया गया॥

मुसलमानों को उसके बन्धन से जो हर्ष हुआ वह लेख द्वारा प्रकट करना असम्भव है उनकी कामना पूर्ण होगई। जिस शत्रु के

बांधने का बर्षों से प्रयत्न होरहा था वह सहजही में बांध लिया गया उसकी मनोकामना पूरीहुई अब्दुलशरीफ़खां के खेमे से मंगलमय दुन्दुभी का शब्द आने लगा मुसलमान कहते थे "अलहम्दअल्ला"

काफिर को जय करलिया। खुदा और रसूलकी सहायता से मुसलमानों को सदैव जय प्राप्त होता गया हिन्दू क्या हैं जब राजा बांध लिया गया तो अन्य हिन्दू मूर्खों का हाथ आनो क्या कठिनहै। इन्शाअल्लाह कोई दिन ऐसा आवेगा जब "इसलाम" संसारमें अपना पता का फहराते हुए देख कर हर्ष को प्राप्त होगा। हिन्दू (काफिर) जहन्नुम (नर्क) को चले जायेंगे॥

उस रातके शेष घण्टे मुसल्मानों ने इसी प्रकार हँसी खुशीमें व्यतीत किये॥

सूर्य देव पिंजरे में बिवश पक्षी की भांति पड़ा हुआहै, उसका कुछ बश नहीं

चलता। लोहेके छड़ बड़े कठोर हैं। उसको अपनी बेबशी और हिन्दू जाति की दुर्दशा ने चिन्ता रूपी भँवर में डाल दिया। "हाय! अब क्या होगा हर जगह मन्दिर गिराये जांयगे गोहिंसा होगी। कितने पुरुष स्त्रियों के रुधिर से पृथ्वी लालहो जायगी। कितने बलात्कारी से मुसलमान किये जायेंगे। पृथिवी पापियों के बोझ से दब जायगी। दुष्ट हिंसक अन्याई अधर्मी और कामी मनुष्यों से भारत देश मिट्टी में मिल जायगा वह इसी चिन्ता में पड़ा हुआ था, उसकी आंख लगगई और भयानक स्वप्न देखने लगा जिसमें एक मनुष्य आ-रत स्वरसे यह लावनी गारहा था।

लावनी।

क्या विपति देश पर चहूं ओर से छाई।

दुखिया भारत की बल बुद्धी सभी नसाई ॥
सुख मंगल धर्म सुराज सभी बिध नासा।
निर्धनता कष्ट क्लेश ने किया निवासा ॥
पर अधीन द्विज बीर बने हैं बासा।
अबत्यागो सुजनजन भारतकी तुम आशा॥
सब मिट गई सम्पत विद्या बुद्धि बड़ाई ।
क्या बिपति देश पर चहूं ओर से छाई ॥
वेदोंका धर्म किया त्याग बने मतवाले।
मिटा ज्ञान पड़े हैं मूर्खता के पाले ॥
नहीं सुधबुध कोई दशाको अपनी सँभाले।
नहीं कोई उपाय सुधार की सोच निकाले ॥
भारत आरत का दुःख नहिं पड़े दिखाई।
क्या बिपति देश पर चहूं ओरसे छाई ॥
तजि सुपथ कुपथ के सभी हुए अनुयाई।
पी भंग धतूरा माटी भभूत रमाई ॥
प्रभु पद को भूले बने ब्रह्म सुखदाई।
निज स्वारथ बश अनर्थ की राह चलाई।

त्रिगुन संग मिल कर हिन्दू संग लड़ाई ।
क्या बिपति देशपर चहुँओर से छाई ॥

सूर्य्यदेव यह सुनकर चौंक पड़ा । क्या सचमुच हिन्दुओं का राज नहीं रहेगा । क्या हिन्दू ऐसे अधर्मी अन्याई और पापी होजायँगे कि अन्य मतावलम्बियों से मिल कर अपने सहवासियों का नाश करैंगे । क्या वह अधर्मी बनकर धर्म के मार्ग को त्याग देंगे । हाय ! हाय !! भारत !!! तेरे भाग्य में क्या लिखा है ? जब इधर उधर देखने लगा कोई मनुष्य न दिखाई दिया । हे ईश्वर यह किसकी आरत वाणी थी ॥

इतने में दूसरी ओर से अब्दुलशरीफखां का क़ाज़ी सहस्रों मुसल्मानों के साथ आता हुआ दिखाई पड़ा । सूर्य्यदेव चुपचाप उन की बाट देखता रहा । इतने में वह निकट आ पहुँचे । क़ाज़ी ने हँसीसे कहा "राजा

साहिब! कहिये क्या हाल है ? सूर्य्यदेव ने उत्तर नहीं दिया। क़ाज़ी फिर सन्मुख होकर बोला मुझको सिपहसालार (सेनापति) ने आपके पास भेजा है। आपको यदि अपना जीवन प्यारा हो तो मुसल्मान होना स्वीकार कीजिये। और बादशाही इज्जत (प्रतिष्ठा) प्राप्त कीजिये, राजा इस अन्तिम वाक्यको सुनकर क्रोधमें आगया। राजपूती ज्वाला भड़क उठी उसने कहा "अब्दुलशरीफसे जाकर कहो यह संदेशा उस समय मुझको सुनावै जब मैं स्वतन्त्र रहूं और मेरे हाथ में खड्ग हो धर्म से अधिक प्यारी बस्तु संसार में कोई नहीं है वह प्राण से बहुमूल्य है। राजपुत्र अपने धर्मको देकर संसारिक सुख कभी नहीं मोल लेता और तुम मेरे आगे अनुचित बात न करो मेरे पास से चले जाओ क़ाजी ने बिचारा कि राजा

बेबश है क्या कर सकता है उसने फिर कोई बात कही जो राजाको अनुचित ज्ञातहुई राजा उस समय क्रोधाअग्नि को शांति न करसका उसने लोहेके पिंजरे को अपने बाहु बल से तोड़ डाला और एकछड़ लेकर मुसलमानों पर टूट पड़ा। मुसल्मान उससे लड़ने को उद्यत नहीं थे। उसने सत्ताइस यवनों को केवल छड़से मार गिराया और पश्चात् आप भी जूझ कर स्वर्ग धाम को चलागया ॥

जिस समय राजा के मृत्यु की सूचना (नीलदेवी) को मिली वह फूट फूट कर रोने लगी। पतिको अनउपस्थिती हिन्दू स्त्रियों के लिये प्रलय का दिन होता है संसार उस की आखों में अँधियारा होगया। खेमे में सन्नाटा छागया। राजकुमार सोमदेव उस का पुत्र और दूसरे राजपूत को धैर्य देने लगे

माता! धीरज से काम लें। राजा ने रण भूमि में प्राण त्याग किया है। क्षत्री के लिये इससे अच्छो और क्या बात हो सकती है? यदि वह स्वर्ग धामको गया तो मैं उसका पुत्र शत्रू के जय करने को जीवित हूं, कुछ सोच करने को आवश्यकता नहीं हम अभो जाते हैं और॥अब्दुलशरीफ का इसका स्वाद चखाते हैं

राजाकी मृत्यु सोमदेव का उत्साह और रानी का बिलाप देखकर राजपतों के हृदय में क्रोधाग्नि की प्रचण्ड ज्वाला भड़क उठी, सबके होंठ कांपने लगे और सबने परस्पर प्रण किया कि "जबतक हम अपने राजाका बदला न लेलेंगे खानपान कदापि न करेंगे,

और उसीक्षण सबने केसरिया बस्त्र धारण किया जिसका यह तात्पर्य है कि अब अन्त समय है या तो शत्रू को पराश्त कर

के नष्ट कर देंगे या क्षत्री वीरों की भांति रण क्षेत्र में प्राण त्याग देंगे ॥

सोमदेवने वीरों का उत्साह देखकर कहा धन्य हो आर्य्य वीर पुरुष गण! जब तक तुम में ऐसी वीरता है भारत को किसी आपत्ति का दिन न देखना पड़ेगा, धिक्कार है उन हिन्दुओं पर जो अन्य देश वालों से मिलकर अपनी जातिको मूलसे नष्ट कर देते हैं। वह जाति विरोधी पापी नर्कगामी हैं कभी मनुष्य कहलाने के अधिकारी नहीं हैं। मनुष्य तुम हो जिनको अपने देशके धर्म्म का और जातिका ध्यान रहता है। तुम्हारी सन्तान का जबतक एक भी सपूत जीवित रहेगा भारत का कभी निर्बंश न होगा। और हम आर्य जातीय गौरव का पताका संसार क्षेत्र में स्थिर करने योग्य होंगे

चलो २ अभी शत्रू के रुधिर से पृथ्वी को लाल करदें और जगत् में यश के भागी हो"

इस वार्तालाप के पश्चात् राजपूतों ने "जय २ कार" की ध्वनि प्रारम्भ करदी। "राजा सूर्यदेव की जय"। युवराज सोमदेव की जय। रानी नीलदेवी की जय'। नील-देवी अपने पुत्र और राजपूतों की बातें सुनती रही। वह उनके पुरुषार्थ और साहस को देखकर प्रसन्न थी परन्तु फिर भी सब सुकुमार थे। उसने अपने नेत्रों से जल पोंछ कर राजपूतों से कहा "स्वस्तिरस्तु! भारत सन्तान चिरञ्जीव भव बीरो ठहरो! मैंने शत्रू के जय करने को कुछ औरही उपाय सोचा है। और इस समय सें तुम्हारी सर्दार हूँ। चेतना! मेरी आज्ञा बिना कोई काम न क-रना और इसी प्रकार शस्त्राभूषित खड़े रहना एक पहर रातके व्यतीत होने पर तुम्हारी

आवश्यकता होगी"। यह कहकर उसने बेटे के कानमें कुछ कहा और फिर खेमे में चली गई ॥

सन्ध्या समय है। अब्दुलशरीफखां के खेमे मे दरबार लगा है। बाजे स्वरीला राग गा रहेहै, गाने वाले मीठी २ तानें छेड रहे है। मदिरा का परस्पर प्रचार हो रहा है सब नशे में चूर है और गाने वाला गा रहा है ॥

शत्रुके जयका यह दरबार मुबारिक होवे।
हर्ष व मङ्गल का यह दिनवार मुबारिकहोवे॥
हिन्दू नादान है बेधर्म्म बे दीन सभी।
शत्रू पर जय तुझे हरबार मुबारिक होवे॥
धन्य ईश्वरको है तुमने जो किया जय यहदेश।
शुभ घड़ी तुमको यह सर्कार मुबारिक होवे॥
कौन संसार में है तुल्य तेरे आज के दिन।
यक कटक हमको यह सरदार मुबारक होवे॥

शस्त्र के तेज से फैलायेंगे हम दीन अपना।
खड्ग इस्लाम का हथियार मुबारक होवे॥

जब सब नाच रंग में मतवाले हो रहे थे, एक मनुष्य ने आकर सेनापति को सूचना दी कि "पृथ्वीनाथ! एक बड़ी सुन्दरी कोकिल बैनी गाने वाली स्त्री आई है महाराजको धन्यवाद देती है। आज्ञा हुई शीघ्र लाओ उसी क्षण एक मृगनैनी पिक बैनी सुकुमारी अञ्चल सँभालती मन्द २ मुसकुराती हुई सेनापतिके सामने आई। वह उस को देखकर ठिठक गया॥

तुम्हारा क्या नाम है?

हजूर चण्डिका कहते हैं

नाम तो बड़ा अच्छा है;

स्त्री ने झुककर सलाम किया। आज्ञाहुई (अच्छा अब कुछ सुनाओ) स्त्री ने सितार कासुर मिलाकर गाना आरम्भ किया और

ऐसा उतम गाया कि वृक्षादि मतवारे हो कर झूमने लगे आहा ।कैसा सुरीला राग है, गला है कि बांसुरी यह कंठ मद मोचनी राग किसीने न सुना होगा, " दर बारो लोग सेना पतिकी बातें दुहराने लगे सेना पतिने अंगूठी देना चाहा चंडिकाने कहा,, हजूर। जरा ठहरो। मुझे तो आज आप से बहुत कुछ इनाम(पारितोषिक)लेना है अन्त समय सब कसर निकाल लूंगी और इस पिकबैनी सुन्दरी ने एक लच्छेदार टप्पा छेड़ दिया । अमीर ने बड़ी प्रसन्नता से कहा आज प्रीतम बियोग और बिछोह को छेड़नकरो आज मंगलाचारको शुभदिन है मेरे निकट आजावो । स्त्री अब्दुल शरीफ़ के समीप जाकर गाने लगी ॥

कहियो यह काफले वालां से कि हम आतेहैं
चले न जावो खुदारा कदम बढ़ाये हुये ॥

भाषा

कहियो संग की सखिन्न से हमहूं पाछे लाग ।
आवतहैं क्षणमात्रमें चलिन जायँ मोहिं त्याग

अहा हो ! क्या फड़कता हुवा गाना है
यह लो तुम भी एक प्याला शराब पीलो
चंडिकाने हाथ बांधकर कहा हजूर । हम
लोग शराब नहीं पीती हैं शरीफ़ ने
कहा अजी वाह !

गरयार मय पिलाये तोफिर क्यों नपीजिये ।
जाहिद नहींहै शेख नहीं कुछ वली नहीं ॥

भाषा ।

यार पिलावे वारुणी क्यों नहिं पियतसुरेख ।
ऋषि नही मुनिनहिं यतीनहिं नहिं ब्राह्मण
नहिं शेख ॥

क्या तुम सच मुच शराब नहीं पीतीहो ।
चंडिका "नही हजूर ।"

सिपहसालार „ तोआजतुमको पीनाहोगा

चण्डिका-"हुक्म सर्कार का"

सिपहसालार शराब में चूर होरहा था। उसने स्त्री को और आगे बढ़ने के लिये इशारा किया। यह और निकट जाकर बैठ गई। एक तो शराब का नशा दूसरे चंडिका के दृष्टि की कटार कटारी से यह घायल हो चुका था। जब वह गाने लगती यह उसके चन्द्रवत मुख पर चकोर की भांति ताकने लगता। अन्त में उसने शराब का प्याला उसके सन्मुख करके कहा " अब इसको पीलो' चण्डिकाने कहा ईमान की बात यह है कि मै नही पीती हूं। आप अधर्म न सिखावो, परन्तु मुसल्मानो ने हठ से कहा 'हमारी खातिर से पीलो' और जब वह प्याला लेकर आगे बढ़ा चण्डिका की कमर से बिजुली की भांति चमकती हुई तलवारने एकही हाथमें राक्षसका सिर धड़से

अलग करदिया। सभा में रंग भंग होगया सब का नशा हरन होगया। मंगल मे अमंगल होगया। इतने में चाण्डका ने सीटी बजाई और उसका शब्द सुनते ही शस्त्रधारी केसरिया वस्त्र आभूषित राजपूत चारों ओर से कूदपड़े। मतवाले मुसलमान एक २ करके मारेगये। सभा का एक मनुष्य भी जीवित न बचा सब मदिरादेवी के भेट कर दिये गये। और सब को मार काट कर चाण्डका राजपूतों के संग खेमे में आई और फिर जयजयकार का शब्द होने लगा। महाराजा सूर्यदेव की जय। राजकुमार सोमदेव की जय। महाराणी नीलदेवी की जय!

इस बातके बताने की कुछ आवश्यकता नहीं है कि चाण्डका वास्तव में स्वयं नीलदेवीही थी, उसने राजपूतों के प्रतिकहा

चौपाई ।

धन्य धन्य तुम भारत वीरा ।
अति पौरषी महा रण धीरा ॥ १ ॥
काटि शत्रु शिर धरणि गिरायहु ।
मर्दि खलन कहँ धूलि मिलायहु २॥
निज स्वामी के ऋण से आजू ।
भयेहुउऋण तुम करि ममकाजू ॥ ३॥
धनि वे जननी जनक तुम्हारे ।
जन्मि जासु गृह काज सँवारे ॥ ४ ॥
धनि वह दुग्ध जासु करि पाना ।
लहेहु आज यशकीर्त्ति सुजाना ॥५॥
जाय बेग अब चिता सँवारहु ।
अन्य काज नहिं कछु जियधारहु॥६॥

दोहा ।

लैपतिशिर निजगोदमें, रखतियधर्मललाम ।
जायमिलोंजेहिशीघ्रमैं, निजपतिसोंसुरधाम॥

चिता उसीक्षण बनाई गई । चिता क्या

थी वैकुण्ठ की अटारीकी सोपान थी। नील देवीने सूर्यदेवके मृतक शरीरको गोदमें रख लिया। सब के पहिले राजकुमार सोमदेव ने अपनी माताके चरणों की बन्दना की और फिर सब राजपूतोंने उसकी पूजाकी। महाराणीने आशीर्वाद दिया राजपुत्र धर्म न त्यागना। धर्म के लिये प्राण दे देना। धार्मिक जीवन व्यतीत करना। जाति देश कुलका धर्म रखना अपने भाइयों के नाश करने के हेतु अन्य म्लेच्छों से न मिलना अपनी मर्यादा और क्षत्राणी के दुग्ध को सदेव ध्यान रखना सदैव राजपूत और शूर वीर क्षत्री कहलाने के योग्य होना और अब भी तुम्हारा भला होगा।

यह व्याख्या समाप्त भी न हुई थी कि धधकती हुई अग्नि देवी के मुख से यह सुरीला राग सुनाई देनेलगा। और सब के

(५)

सुलेखा पण्डिता

दोहा।

आर्य तीयसे अधिक कोउ, प्रेम न राखतअंग।
प्रतिपतंगनहिं जलैजिमि, दीपशिखाकेसंग॥

काशी के निकट पूर्व दिशा में गंगा के तट पर रामनगर एक बड़ा ग्राम बसताहै। यह बर्षों से काशी नरेशों के राजधानीके कारण दूर दूर प्रसिद्ध है। इस राजधानी को यदि सुसज्जित सतमहले अठमहले और सुशोभित मन्दिरों का अभिमान नहीं है तो भी काशी के महाराजों कि विद्वत्ता और विद्या सन्मान के कारण प्रायः बड़े बड़े पण्डितों और संस्कृत के महान् विद्वानों का यह आश्रम माना गया है।

इस रामनगर में कृष्ण वर्म्मा एक ब्राह्मण रहता था वर्म्मा शब्द वास्तवसेंक्षत्रियोंकेलिये है। परन्तु हम नहीं कह सकते कि यह शब्द उसके नाम को अङ्ग था अथवा किसी मुख्य कारण से वह कृष्ण वर्म्मा कहलाता था। यह ब्राह्मण संस्कृत का विद्वान था। और शास्त्रों के व्याख्या करने वालों में उसकी प्रथम गणना की जाती थी॥

सुलेवा इसकी पुत्री थी। यह अपने माता पिता की अकेली बेटी थी। विद्वान ब्राह्मण ने इसको पुत्रके भांति पठन पाठनको शिक्षा दी थी। सुलेवा केवल पौराण धर्म्म शास्त्र और ज्योतिष की विद्वान् नहीं थी, वरन् वेदान्त सूत्रों के व्याख्या करने में उसकी बुद्धि प्रशंसनीय थी, वह सामान्य सुन्दर छोटे डील डौल की दुबली पतली स्त्री थी। जब यह युवा अवस्था को पहुँची तो माता पिता

ने लोकव्यवहार और शास्त्रानुसार जगन्नाथ नामी शास्त्री एक युवक पंडित से उसका विवाह करदिया। जगन्नाथ की विद्या ने उसके लिए सोने में सुहागे का कामकिया, वह पतिकी सेवाको अपना मुख्य धर्म प्रतीत करती थी, और उसकी सेवा में रह कर न्याय सांख्य, वैशेषिक और मीमांसादि ग्रन्थों में पूर्ण विद्वान् होगई ॥

सुलेखा सब प्रकार से विद्वान् बनकर विद्या प्रचार और देश उन्नति के लिए उस ने रामनगर में एक कन्या पाठशाला स्थापित की। वह अपने पतिकी आज्ञानुसार उसमें पढ़ाया करती थी। और प्रायः हिन्दुओं की बालिकायें और विधवायें उसमें सिक्षा पाती थी, सुलेखा पाठशाला में स्त्रियों को प्रायः धर्म सम्बन्धी उपदेश भी सुनाया करती थी। और उनको विद्या में उत्साह बढ़ाने के लिए

सहायता करती थी, आज कलकी भांति उस समय भी वेदान्तका घर घर चर्चा रहाकरता था। सामान्य स्त्रियों में भी ईश्वर जीव प्रकृति के विषय पर वाद विवाद होता था। सुलेखा को भी वेदान्त का बड़ा प्रेम था और तत्व दर्शन उसका संस्कृत ग्रन्थ विद्वता का चिन्ह अब तक संसार में उपस्थित हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि इस पुस्तक को उसने स्वयम् रचा था, अथवा उसके पति ने भी उसको सहायता की थी परन्तु अनुमान से यही प्रतीत होता है कि वह उसी के बुद्धि रूपी रत्न का प्रकाश है।

स्त्री पुरुष दोनों आनन्द पूर्वक बहुत दिन तक रामनगर में आयु व्यतीत करते रहे। इन के कोई सन्तान न थी। उस समय तीर्थयात्रा मुख्य धर्म होने के कारण इन की तीर्थयात्रा करने की इच्छा हुई। उस

समय मन्द्राज के प्रसिद्ध नगर श्री रंगपटन में दूर दूर के पंडितों की एक सभा होने वाली थी। जिसका आशय यह था कि जीव और ईश्वर के सम्बन्ध पर एक मुख्य सम्मति स्थित की जाय, कि ब्रह्म और जीव एक है या एक दूसरे से पृथक् है। इस सभा में द्वैतवाद और अद्वैतवाद सम्प्रदायों के सारे मत मतान्तर वाले एकत्रित थे। जिन में माधो आचार्य्य रामानुज आचार्य्य और शंकर आचार्य्य के शिष्य विशेष कर उपस्थित थे। इस प्रकार का शास्त्रार्थ प्रायः देशके लिये लाभ दायक हुआ है, परन्तु कभी कभी सब मत मतान्तरों के खोजने वाले हठ वस पक्षपात पर आ गिरते हैं तो परस्पर झगड़ा होजाते है और फिर वे सत्य मार्ग के जानने में असमर्थ होजाते हैं। श्री रंगपटनकी सभा दो विभागों में विभक्त

की गई। दोनों भागों के मनुष्य हठ वस अपने अपने पक्ष का पार खींचते थे ! दक्षिण देशके रामानुज सम्मदायवालों को शंकर स्वामी की वाणी से इतना घृणा है कि प्राय: उनमें शास्त्रार्थ के समय परस्पर मार पाट होजाती हैं। श्री रंगपटन में भी यही दशा हुई, और जब भलीभांति ज्ञात होगया किसब पक्षपात और हठ धर्म पर आरूढ़ है तो सुलेवा अन्त में अपने पपिकी अज्ञानुसार पण्डितों का मंडली में खड़ी होगई, ईश्वर और जीव के विषय पर जो व्याख्या की उसे यहां अंकित नहीं कर सकते। सम्भव है वह समयानुकूल इस बिषय पर कुछ न कह सकी हो, परन्तु उसकी व्याख्या का सारांस जो हम तक पहुंचा है हम यहां संक्षेप से लिखते है। ज्ञानी मनुष्य देखेंगे कि इस पवित्र देवी के वाक्यों में न्याय से कितना काम लिया गया है। और किस प्रकार इस

पूज्य देवी ने अपने वाक्य रूपी शीतल जल से उनकी द्वेषरूपी अग्नि को शान्ति की है दूसरी और धर्म्म के सत्य आशय की शिक्षा दी है ॥

सुलेखा ने कहा "सद्पुरुषो! विद्या विलास का सत्य तात्पर्य यह है कि मनुष्यकी विचार शक्ति की उन्नति हो क्योंकि विचार से अन्तःकरण का पर्दा खुल जाता है और विचारद्वारा की सहायता से सत्य और असत्य का निर्णय करते हुए मनुष्य ज्ञान के बल से परमपद का अधिकारी बनता है। आप महात्माओं का पुरुषार्थ धन्य है। जो प्रयत्न सत्य के ग्रहण कराने और असत्य के त्याग करने के लिये किया जाता है वह धन्य है! परन्तु इस शास्त्रार्थ का यदि यह परिणाम हो कि लोग अपने पक्ष पर आरूढ़ होजायें तो इसका परिश्रम व्यर्थ है। मैं

अनुमानिक एक मास से आपका व्याख्यान सुन रही हूं परन्तु कोई बात मेरी समझ मे अब तक नहीं आई। कर्मकाण्डी अपना पक्ष खींचते है, द्वैतवादी ईश्वर और जीव को दो प्रमाणित कर रहे है। अद्वैतवादी ईश्वर और जीव मे कोई भिन्नता नही बताते यदि आपका शास्त्रार्थ न्याय पर आरूढ़ होता तो मुझको यहाँ उठाके बोलने की आवश्यका न होती। पुरुषों की सभा में स्त्रियों की वक्तृता आज कल अनुचित समझी जाती है, परन्तु आप जानते होंगे कि विद्या का मुख्य सम्बन्ध "सरस्वती" से है। सरस्वती स्त्री है और इसी कारण विना निमन्त्रित किये हुए आतिथ्य की भांति स्वयं सभा में उपस्थित होकर तुम्हारे परस्पर के झगड़े को दूर किये देती हूं। आप लोग अन्य विषयों पर व्यर्थ शास्त्रार्थ कर

रहे हो। धर्म्म के मूल को छोड़ते जाते हो यदि मूल पदार्थ पर ध्यान दो तो सम्भवहै कि परस्पर द्वेष और बैरभाव कदापि न हो, ईश्वर और जीवको एक अनेक प्रतीत करने वाले दोनों का यह भावार्थ है कि कर्म से उपासना और ज्ञानसे ईश्वर की निकटता इस प्रकार बोध करलीजाय कि आपका ध्यान अन्त:करण से परे हो जाय इसी को "निर्विकल्प समाधि" कहते हैं यही "कैवल्य" है कहा जाता है और यही "परमपद" है और इसी के ग्रहण करने के लिये जीव और ब्रह्म की एकता पर बिचार किया जाता है यदि यह और उपाय से असम्भव होता। तो विशेष विचार करने की आवश्यकता न होती। कर्म उपासना, और ज्ञान यह तीनों एकही पुष्पलता के तीन फूल हैं और सब का आशय भी एकही है।

यदि आप महाशयों के समझाने के लिये मैं उनपर अलग अलग दृष्टि डालूं तबभी मेरा मनोर्थ सिद्ध होजाताहै। कर्म काण्डी कहताहै कि हम शुभकर्म दान पुण्य आदि के द्वारा अपने हृदय को इतनादृढ़ करलें कि उससे आपका विकार परे होजाय। ईश्वर का उपासक प्रेमीभक्त प्रसन्न रहता है कि वह इसप्रकार परमात्मा के ध्यान में मग्न होजाय कि अपने आपको भूलजाय सिवाय ईश्वर के उसके ध्यान में कोई न आवे परमात्मा में मरे और परमात्मा मे जिये वह तनसे मनसे ईश्वरके चरणोंमेंलीन होजाय। ज्ञानी हरबात निरख परख करते हुये मूल तत्व की ओर ध्यान रखताहै। वह सर्वशक्तिमान परमात्मा के ध्यान से ही अपने हृदय को बढ़ायो चहता है कि आपका ध्यान उससे दूर हो जाय और जल

बुन्द व समुद्र की अवस्था में कोई विशेषता प्रीत न हो। यही सबका परिणाम है। यही सबके प्रयत्न का सारांश है सबका आदर्श एक है फिर क्या कारण है कि हम परस्पर विवाद करते हैं और व्यर्थ व्यसन में हम अपने आदर्श को भूल जाते हैं॥

जिस समय सुलेवा व्याख्या करचुकी तो सब वाह वाह करने लगे सबका झगड़ा निबट गया और सारी सभाने परस्पर अनुमतिकरके उसको पंडिता की पदवी दी और उससमय से दक्षिण देश और बनारस के नगर में वह "पंडिता सुलेवा" के नाम से प्रसिद्ध हुई॥

बंगाल प्रान्तकी भांति दक्षिण देश की स्त्रियों में आवरण परदा का प्रचार न पहिले कभी था न अबहै बहुत सी स्त्रियां भी इस सभा में एकत्रित हुई थीं पंडिता की बुद्धि

सानी विद्वत्ता देखकर उनलवने उसको अपने यहां आने के लिये निमन्त्रित किया और उससे स्त्रीधर्म पर उपदेश करने के लिये प्रार्थना की सुलेकाने उन स्त्रियों की सभा मे जा व्याख्यान दिया वह पहिले व्याख्यान से कहीं अच्छा है। वह कहती है "बहिनो यह शरीर हड्डी त्वचाऔर रुधिर का बना हुआहै इसमे चोटी से एड़ीतक मलमूत्र भरा है। कितना ही इसको स्नान द्वारा पवित्र करैं परंतु यह ज्यों का त्यों होजाता है। यह उस ढांचा की भांति है जिसके भीतर घृणित और मलीन वस्तु भरी हो और ऊपर से एक स्वच्छ कपड़ा लपेटा हो यदि उसका एकएक अंग अलग अलग दिखाया जाय तो तुम्हारा जी घृणित हो जायगा इस हेतु इसपर अभिमान करना मूर्खताहै। प्यारी बहिनो! यह शरीर नाशमान और

क्षण भंगुरहै यह "चारदिना की चांदनी और फिर अन्धियारा पाखकी उक्ति के अनुकूल है जब इन्द्रियां दुर्बल होजाती हैं तो आंख कान हाथ पांव जवाब दे देतेहैं फिर उसी को देखकर चित्त घृणा करने लगता है इस का सौन्दर्य उसकमल पुष्पों की भांतिहै जो सूर्य के किरणों से बिकसित होकर सूर्यास्त समय मुर्भा जाता है इसको अभिमान व्यर्थ है देखो ?

दोहा

नव योबन अरु रूपका गर्भ न हियमें राख।
चार दिनाकी चांदनी फिर अँधियारा पाख॥

"बहिनों हममें से प्राय: बहिनों को सांसारिक पदार्थ एकत्रित करने और सुख भोगने की बड़ी आकांक्षा रहती है। इनके उपार्जन के लिये कितने उपाय किये जाते

हैं। परन्तु तृष्णा की अग्नि कभी शान्ति नहीं होती। यह वास्तवमें मृगतृष्णा है। इस के पीछे हम अपने धर्म कर्म को भूल जाते हैं। परिणाम यह होता है कि जब अन्त समय आ पहुंचता है, तो हाथ मलकर पश्चा-ताप करना पड़ता है। अन्त समय में अ-पने किये पर पछिताते हैं कुछ काम नहीं आता इसलिये सांसारिक सुख विलास की कामना मिथ्या है देखो महात्मा कबीर साहब कहते।

"प्यारी बहिनों! तुम्हारी अवस्था वा-स्तवमें तपकी अवस्था है। तुम्हारा निज का कुछ नही है। तुम संसार में आनन्दा प्रसिद्ध हो। तुम पतिको, सन्तानको, पड़ो-सियों को, पालू जीवों को, मित्रों को, अन्न द्वारा तृप्त करती हो। तुम लक्ष्मी हो घरके भीतर बाहरी तुम्हार रचना देखकर चित्त

लुभा जाता है, सद्आचरण, सद्व्यवहार, सद्प्रबन्ध यह तुम्हारे कर्तव्यहैं। तुम अपने घरके द्रव्य और आभूषणादिको रक्षक और स्वामिनी हो। प्रत्येक काम तुम्हारे हाथ से होताहै। तुम्हें सरस्वती कहलाती हो। विद्या और शिक्षा जो दुनिया पाती है उसकी मुख्य दाता तुम्ही हो। सब से पृथक्क तुम बालकों को सभ्यता की शिक्षा देती हो। माता होने के कारण तुम्हारा अधिकार सन्तान पर अधिक है। वहिन की दशा में तुम भाईको वीरता और पुरुषार्थ को मार्ग पर चलाती हो। पुत्रीकी दशामें मातापिता कुटुम्ब परिवार तुम्हारी पूजा करते हैं कोई धर्म्म कर्म्म का कार्य विना तुम्हारे सिद्ध नहीं होता। इस हेतु तुमको सुशीला और गम्भीर चित्त बननेकी बड़ी आवश्यकताहै। तुम्हारे लिये बनाव चुनाव अप्रशंसनीयहै।

बहिनों ! तुम संसार में अपने लिये नहीं बनीहो । प्रकृति अपने लिये नहीं होती प्रत्युत दूसरोंके लिये होती है । यह बड़े सौ-भाग्य की बातहै क्योंकि जो अपने लिये जीता है वह मृतक है जो दूसरों के लिये जीताहै वह जीवित है संसार में जो कुछ जीवन है वह तुम्होरा सम्प्रदान किया हुआ है । वास्तवमें तुम उसको अपनी नहीं कह सकती हो और न वह तुम्हारी है । तुम पुरुषके हृदय में अपना घर बनाती हो । पुरुष की दासी कहलाते हुए उसकी और सारे घरकी महरानी हो, बेटे के आधीन रहकर भी उससे प्रतिष्ठा पानेको अधिकारी हो । चाहे वह लाखों पर राज्य करता हो, परन्तु जबतक तुम्हारे चरण कमलों की धूरी अपने माथे पर न लगायेगा उसका कर्तव्य पूरा नहीं होसकता । न्यायशास्त्र

और धर्मशास्त्र तुमको वह उच्चपद देते हैं जो किसीको नहीं मिलसकता अतएव तुम में आपाका प्रवेश करना बड़ा घृणितकार्यहै।

"प्रेममय बहिनो ! तुम प्रेमकी मूर्ति हो। तुम्हारी सबसे बड़ी प्रशंसा प्रेम है । जिस प्रकार सूर्य अपने प्रकाश से संसार को आनन्दित करदेता है उसी प्रकार तुम भी अपने प्रेम से संसार को आनन्दित करती हो। वह स्थान उजाड़ है, जहां तुम्हारा बास नहीं है। वह घर, घर नहीं कहलाता जिसको तुम्हारा चरण पवित्र नहीं करता। प्रेम तुम्हारी प्रशंसा है तुम को प्रेम का संस्कार चारोंओर फैलाना चाहिये। प्यारी बहिनों ! तुम्हारा किसी प्रकारके राग व द्वेष में फँसना अनर्थ होगा।

"हे प्रिय बहिनों ! यह सब कुछहै, परन्तु इन सब बातों पर जो सब से पवित्र काम

संसार मे तुमको करना चाहिये वह पतिकी सेवा है। और यह क्यो ? इसलिये कि जिस धर्म की बड़ी प्रशंसा की जाती है जिसको सब महिमा वर्णन करते हैं जिसका प्राप्त होना दुर्लभ है, वह तुमको सहज ही में पति की सेवा से प्राप्त होता है। तुम साध्वी हो जिस प्रकार साधू परमेश्वर की सेवा के अतिरिक्त और किसी का ध्यान नहीं करता तुम अपने पतिही का ध्यान रखती रहो, उसकी सहायता से तुम्हारा जीवन जितेन्द्रिय अव-स्थाको प्राप्त होकर सुखसे व्यतीत होजाता है। तम सर्वांग रूप से पतिकी प्रीति को अपनी ओर खींचती हो, उसके अवगुण पर ध्यान न देते हुए उसके गुणों पर मोहित रहती हो। और इससे तुमको संसार में सुख मिलता है, और सहजही में जन्म सुफल होजाता है। संसार में तुम से अधिक

कोई सौभाग्यवान नहीं है। जिस प्रकार तुम पतिकी सेवा से आत्मिक उन्नति प्राप्त करलेती हो उस प्रकार कोई नहीं कर सकता। न तुमको योग की आवश्यकता है और न तपकी आवश्यक्ता है। तुम पतिकी सद्भक्ति भिक्तता और प्रेम में अपना काम पूर्ण कर लेती हो, अपनी कामनाओं को उस पर बलिहार कर देती हो, उसके सुखके लिये अपना सुख छोड़देती हो, इससे अच्छा और क्या सत्यव्रत होसकता है। यदि स्वर्ग का किसी को अधिकार है तो तुमको है। तुम पतिके जीवनको अपना जीवन समझो और तन मन सब कुछ उसपर अर्पणकरो। इस बात में कमी करना पति की सेवा में आलस्य करना, हेबहिनों! तुम्हारे लिए हानि कारक होगा"। यह उत्तम व्याख्यान देकर सुलेखा अपने पति समेत वहां से चल पड़ी।

तीर्थ यात्रा के पश्चात् यह महात्मा रामनगर लौट आये। इनकी तीर्थ यात्रा ने बहुतेरों को लाभ पहुँचाया और स्वयम् उन को भी लाभ हुआ।

वर्षों तक यह रामनगर में रहते रहे। सुलेवा अपने पति को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया करती थी अन्त में जगन्नाथ शास्त्री के दिन पूरे होगये वह इस असार संसार को छोड़ स्वर्ग धाम को चला गया। सुलेवा को संसार अँधियारा होगया उसको जो दुःख हुआ उसका वर्णन लेख द्वारा असम्भव है लोग समझाने आये। संसार के क्षण भंगुर होने की व्याख्या करने लगे ईश्वर के कर्मों मे कौन हाथ डाल सकता है। उसकी इच्छा बड़ी प्रबल है। मृत्यु से मनुष्य हारा है। "सुलेवा ने कहा। तुम सत्य कहते हो मैं। स्वम् सारी बातें समझती हूं परन्तु शोक

यह है कि पति मुझसे पहिले स्वर्ग को चले गये, यह शरीर पती ही का था पती के साथ जायगा और पतिकी संगतमें शांति मिलेगी"

लोगों ने उस देवी के अन्तिम वाक्यों से समझा कि यह सती होगी पड़ोसियों ने बहुत कुछ समझाया। उसने आंसू पोंछ कर सब को उत्तर दिया " इस प्रकार की बातें व्यर्थ हैं मृतक को जीवित रखना मिथ्या है॥

उस समय देशमें सती होनेकी रीति थी। उसके हठको देख कर लोगों ने चिता सजने के लिए आज्ञा दी सुलेखा ने पुराने कपड़े उतार दिये। नई चूनरी पहिनली। सुहागके गहने नखशिख से पहिन लिए, और सिंदूर की डिबिया हाथ में लेकर चिता पर रक्खी हुई लाश का परिक्रमा किया और मुसकराती हुई चिता पर पतिके पांयते बैठ गई। लोगों ने कहा "रीति तो यह है कि पतिका

शिर गोद में रखकर सती होती है" सुलेवा ने कहा मेरी जगह पतिके पांव के नीचे है मै अपनी पुरानी जगह नहीं छोड़ना चाहती"

इस अवसर पर सुलेवा ने बहुत बातें नहीं की केवल ईश्वर से प्रार्थना करती रही। और वह प्रर्थना भी सामान्य प्रार्थना न थी जो: आप आधुनिक समय हिन्दू स्त्रियों के मुखारबिन्द से प्राय: सुना करते है "परमात्मन्! तेरी पुत्री जब जब संसार में आवे इसी पति के साथ बिवाह हो, और यही अन्तिम अभिलाषा है। थोड़ी देर में चिता की अग्नि प्रज्वलित होगई और सब के देखते २ सुलेवा सी धर्म्मात्मा यह प्रेम, मय कर्त्तव्य यह खेल क्या संसार में किसी और देश में भी देखा है सच है।

हिन्दू तियसे अधिक कोउ, प्रेम न राखत अंग।
प्रीत पतंग नहिं जले जिमि, दीप शिखाके संग

धन्य है भारत वर्ष जिसमें ऐसी२ पवित्र देवियां अवतार लेती थीं और अपने पद पंकज से इस भूमिको पवित्र करती थीं ॥

धन्य धन्य यह देश हमारा ॥
जहँ अस देवि लीन्ह अवतारा ॥
अस न देश कोई जह जग माहीं ॥
भारत भूमि न देखि सिहाहीं ॥
धन्य धन्य यह देश निवासी ॥
जे भारत संतत दुख नासी ॥
जिनकी जननि होहिं अस देवी ॥
निशदिन पति पद पंकज सेवी ॥

॥ दोहा ॥

उपमा भारत देश की, लखि न परत चहुं ओर
इन्द्र पुरिहु से पट तरत, सकुचत अतिमन मोर॥

—— o ——

६

* मदालसा *

॥ दोहा ॥

प्रेम पियाला जिन पिया, सदा रहे अलमस्त ।
शीशहु दिये जो मिलहि कहुं, प्रेमरत्न तो सस्त

"मदालसा" एक बड़ी सीधी साधी और सत्य आचरण वाली स्त्री थी। यह "विश्वसुधा नामक एक गन्धर्व देश के राजा की कन्या थी, और इसका विवाह अयोध्या के प्रसिद्ध राजा शत्रूजित के पुत्र ऋतुध्वज से हुआ था। यह बड़ी सुन्दरी और रूपवती थी। बाल्यावस्था में इसके पिता ने विशेष स्नेह के कारण इसको शास्त्रों की शिक्षा दी थी। धर्म्म शास्त्र, नीतिशास्त्र, संगीत, काव्य और चित्रादि विद्या में बड़ी निपुण थी।

एक दिन वह अपनी सहेलियों के साथ अ-शोकवन में सैर कर रही थी। संगकी सखियां सुरीले गीत गाती हुई अपने ध्यान में मग्न हो रहीं थीं। किसी को अपने तन बदन की सुध न थी। दुर्भाग्यवस वहां पर पातालकेतु राक्षस अकस्मात आ निकला मदालसा के रूपको देखकर मोहित होगया वह बड़ी देर तक खड़ा हुआ मदालसा की अनुपम छबि को देखता रहा। रूपकी बरछी उसके वार पार होगई उसने ऐसी रूपवती स्त्री स्वप्न में भी नहीं देखी थी। वह सोचने लगा ईश्वर यह मनुष्य है या कौन है! आकाश से कोई तारा तो नहीं टूट पड़ा! इन्द्र की अप्सरा तो नहीं है! यह छबि, यह छटा, यह सौन्दर्य, यह गोरा २ शरीर सा अंग मानो ब्रह्मा ने सांचे में ढाल कर बनाया।

दोहा

कोटिनशशि जोमिलकरहिएकसमानप्रकाश
वारत वाके रूप पर जिय में होत उसास ॥

यह अपार रूप देख कर उससे नरहा गया लज्जा को त्याग कर उसने मदालसा को अपने कपट जालमें फसा लिया और घर पहुंचा देनेके मिससे उसको बातों में लगा कर अपने देशकी ओर राही हुआ। जब बेचारी स्त्रियों ने देखा कि वह उसे किसी दूसरी ओर लिये जारहा है तो उनको चेत हुआ, बेचारी चिल्लाने लगीं परन्तु चिल्लाने से क्या होसकता था। यह इनी गिनी दो चार स्त्रियां थीं राक्षसों का सामना करना कठिन था। मदालसा दुःख सागर में डूब गई परन्तु उसने धैर्य और साहस को हाथ से न जाने दिया। जब राक्षस उसको साथ

लिये एक पहाड़ी के मार्ग से होकर जा रहा था तो मदालसा को वृक्षके नीचे एक स्त्री बैठी हुई दिखाई दी उसने रोते हुए अपना एक आभूषण उसकी ओर फेंककर कहा मैं मदालसा हूं, मुझे राक्षस पकड़े लिये जारहा है उस देवीने कहा मैं तेरा सँदेशा ऋतध्वज को पहुंचा दूंगी तू कुछ बिलाप न कर राह चलते क्या बात चीत होसकती थी परन्तु डूबते को तिनके का सहारा बहुत होताहै। मदालसा को कुछ धीरज हुआ उसने समझा मैं कभी न कभी इस दुष्टके पंजेसे अवश्य छूट जाऊंगी और उसकी सहेलियोंको भी ढाढ़स बँधगया। पातालकेतु ऋतुध्वज का नाम सुनकर चौंक पड़ा वह उसको जानता था। अयोध्या के सूर्यबंशी शूरवीर स्त्रियों का बिलाप सुन कर उसकी रक्षा करते थे। उसने सोचा अब कुशल नहीं है और इस

हेतु उसने मदालसा को बहुत दूर सुनसान स्थान मे लेजाकर ठहराया जो उसके देश की सीमा पर था।

जिस स्थान में मदालसा को लेजाकर राक्षस ने रक्खा वह एक रमणीक बगीचा था फूलपत्तों से वाटिका सुशोभित थी, भांति २ के पक्षी पुष्प लताओं पर चहक रहे थे। क्यारियों में मयूर नाचते थे। मध्य बागमें एक सुन्दर भवन था। राक्षस अपना प्रेम और स्नेह प्रगट करने के लिये प्रायः आया करता था परन्तु रानी उसके देखने से घृणा करती थी। जितनाही वह उसको समझाता था उतनाही वह दुखी होती थी। राक्षस उसके साथ स्नेहका बर्ताव करता था और मदालसा ईश्वर के भरोसे अपना दिन काट रही थी।

अब इधरका चरित्र सुनिये। मार्गमें जिस देवीने मदालसा को धीरज दियाथा, वह पार्वती महात्मा शिवजी की स्त्री थी। उसने राजकुमार ऋतध्वज को मदालसाको सन्देशा पहुंचाया, और उसको बेचारी कन्या के छुड़ाने के हेतु तत्पर किया। ऋतुध्वज उस समय एक ऋषिके यज्ञ को रक्षा कर रहा था वहां जो राक्षस यज्ञ विध्वंस करने के लिये आते थे, वह इक्ष्वाकु सन्तति के हाथ से मारे जाते थे, उस राक्षसों में जो मारे गये थे उनमें पातालकेतु का एक भाई तालकेतु भी था। वह इस घातमें रहता था कि किसी प्रकार अवसर पाकर राजाको मार डाले और अपने भाईका बदला ले॥

जिस समय ऋतुध्वज को पार्वती मदालसा का संदेसा सुना रही था, पातालकेतु अपने भाईका बदला लेने की घातमें लगा

था, उसने विचार किया, ऋतुध्वज अकेला जगंल में होगा उसका मारलेना क्या बड़ी बात है उसने उसी क्षण मदालसा को यकु ण्डला दासीको सौंपकर आप तपोवन की ओर चल निकला। ऋतुध्वज भी उसी सम य में मदालसा के छुड़ाने के हेत पातालकेतु के स्थान की खोज में राही हुआ, भूले भट कों का खोज लगाना कोई सहज काम नहीं परन्तु जो लोग किसी काम पर कटिबद्ध हो जाते हैं वह सफलता को प्राप्त होते हैं, खोज करते पता लगाते ऋतुध्वज उस स्था न पर आ पहुंचे जहा मदालसा बन्दी में थी। उस रमणीक स्थान को देख कर उस का जी प्रसन्न होगया और इधर उधर दे खने लगा। चौकीपहरे का अच्छा प्रबन्ध नहीं था। क्योंकि राक्षस कापूर्ण विश्वास था। कि यहां कोई न आसकेगा। और न इस

स्थान का किसी को पता लगेगा, वह यह नहीं जानता था कि ईश्वर अपने दीनों की सहायता अनेक विधि से करताहै।कौन स्थान है जहां वह व्यापक नहीं है । कौन ऐसी वस्तु है जो उसके अलौकिक रचना से सुशोभित नहीं। जो किसी अनापराधी को सताते हैं वह स्मरण रक्खें कि उनकी माया ईश्वर के सामने वैसी ही निष्फल हो जाती हैं जैसे मकड़ी के जाले का धागा वायु प्रसंगसे अलग होजाता है। जब कोई दीन दुखिया ईश्वर कीशरण पुकारता है तो परमात्मा उस कीबन्दी के काटने और दुःख निवारने का उपाय यवश्य कर देता है ॥

॥ सोरठा ॥

दीन बन्धु भगवान, दीनानाथ दयालचित।
टारत दुःख महान, सुनतटेर निज दीन की॥

राजा ऋतुध्वज सावधानी से वाटिका की सैर कर रहा था भांति भांति के सुगन्धित फूल पत्तों की रचना और उनकी विचित्र उपमा को देखकर मनही मन में प्रफुल्लित हो रहा था, कि इतने में यकण्डला की दृष्टि उस पर जा पड़ी उसने तत्काल मन्दिर में जाकर मदालसा से कहा "फुलवारी में कोई युवक राजकुमार सैर कर रहा है उसकी छबि अवलोकन करने योग्य है, मदालसा ने कहा हो न हो यह ऋतुध्वज ,,होगा और उस देवी का भेजा यहां आया होगा और मेरे छुड़ाने की घात में होगा, उसने दासी को उसी क्षण भेजा और उसने राजा के पास जाकर अर्घ देकर कहा "आप राजमन्दिर में चलें हमारी रानी आपको बलाती है। अन्य देश में पराये घर से ऐसे निमंत्रण के आने से उस को

आश्चर्य हुआ ऋतुध्वज तो बड़ा दूरदर्शी और चतुर था, कुछ जी में डरा कि ईश्वर जाने क्या बात आ पड़े। परन्तु दासीकी बात चीत से उसकी शंका जाती रही वह विचार करने लगा कि जिस रानी की चेरी इतना सुन्दरी है वह कितनी रूपवती होगी। उस से पूछा मैं तुम्हारी रानी के पास चलूंगा परन्तु तुम बताओ कि यह घर किसका है। यह स्थान सूनसान क्यों है। यहां कोई पुरुष नहीं दिखाई देता 'दासीने उत्तर दिया "यह वृक्षकेतु का स्थानहै और इद दिनों में पाताలकेतुके अधिकारमे हैक्योंकि पातालकेतु और तालकेतु दोनों वृक्षकेतु के पोते हैं। गालव ऋषिकी यज्ञ भंगकरने में एक भाई मारागया और एक राजकुमार ऋतुध्वज से हारकर यहां छिपा रहया-था और एक रूपवती राज कन्या मदालसा को पकड़ लाया है' उससे

विवाह करना चाहता है, परन्तु राजकुमारी उससे घृणा करती हैं। वह कहती है मेरा पति कोकेवल राजा ऋतुध्वज है और मैं इस जन्म में किसी और से विवाह न करूंगी पातालकेतु निराश होकर ऋतुध्वज के मारने की घात में लगा है। एक तो उसको अपने भाई का बदला लेना है, और दूसरे वह जानता है कि जब तक ऋतुध्वज न माराजायगा तब तक मदालसा का हाथ आना कठिन है।

दासी के यह बचन सुनकर ऋतुध्वज निर्भय होकर भीतर चलागया। मदालसा उसके स्वागत के लिये उठ खड़ी हुई और लज्जा से आंख मूंदकर कहने लगी "मैंने जिस प्रकार तुमको बुलाया है, स्त्रियां उस को घृणित समझती हैं परन्तु मुझको एक देवीने धीरज दियाहै कि ऋतध्वज तुमको

छुड़ाने आवेगा अतएव मैं उसकी बाट देख रही हूं वह मेरा पति है। यदि तुम ऋतध्वज हो तो स्पष्ट प्रगट कह दो जिससे शंका दूर होजाय"। राजकुमारने उत्तर दिया " मैं सचमुच ऋतध्वज हूं और तुम्हारे छुड़ाने के हेतु यहां आया हूं। तुम कुछ चिन्ता न करो पातालकेतु मेरे हाथ से जीता न बचेगा॥

जब इन दोनोंमें परस्पर बातें हो रही थीं तो महर्षि नारदजी बीना हाथ में लिये ईश्वर का गुण गाते यहां आ निकले, और कहने लगे "राजन्! मैं बहुत दिनो से तुमको खोज रहा हूं। तुम्हारे चले आने से गालक ऋषिको राक्षसोने फिर आ घेरा है और नानाप्रकार का उपद्रव मचा रक्खा है तुम इस राज कन्याको लेकर शीघ्र अयोध्या को प्रस्थान करो॥

ऋतुध्वज ने नारदमुनि से कहा,, यह राज कन्या मेंरी धर्मपत्नी होना चाहतीहै स्त्रियों की रक्षा करना हमारा धर्महै परन्तु इस का बिवाह यदि मेरे साथ होजाय तो वड़ा सुन्दरहोगा और इसकी रक्षाका अधिकार मुझको मिल जायगा नारदजीने समझाया इतनी शीघ्रता उचित नही अयोध्या चल कर तुमारा विबाह होनाचाहिये, ऋषि की आज्ञनुसार सबदूसरे हीदिन वहांसे चलनिकले।

जब अयोध्या में पहुचे यहा शत्रुजित अपने बेटाकी बधूको देखकर वड़ाआनन्दित हुआ औरमदालसा के पिता बिश्व सुधाकोबुलाकर वैदिकरीतिसे उनका विबाह संस्कार करादिया जबबिबाह उत्सव समाप्त हुआतोमदलसा ने सबके सामने एक बड़ा

प्रकाशमय हीरा रितुध्वज के हाथमें बांध कर कहा स्वामी यह रत्न में इस विवाह केस्मरणार्थ आपके हाथ में बाधती हूं यह आपको हमारे परस्पर प्रतिज्ञा को स्मरण करत रहेगा यदि आप इस को हाथसे खोदेंगे तो मदालसा भी साथही इसअसार संस्सकार से राहीहोजायगी एक बात और आप की सेवामें निवेदन करतीहूं किआप पाताल केतु की माया से कभी निश्शंक न रहना ॥

राजकुमार ने यह बात स्वीकार की और वह दोनो कई वर्षतक अयोध्या में रहकर ऋशियो के यज्ञादि कर्मों कीरक्षा करते रहे एक बार जब रितुध्वज बन में आखेट खेलने गया हुआ थां तो धूपकी उष्णता से व्याकुल होकर वह एक सरोवर के तट पर पानी पीने को झुकाज्योंहीपानी

पीने लगा त्योंही एक मनुष्य उसके पीछे दौड़ा चला आया। राजा ने पीछे फिरकर देखा और चाहा कि बाण मारकर उस का प्राण लेवे परन्तु उसने चिल्लाकर कहा "मैं चन्द्रचूड़ा मुनि हूं औरनाग वंशी अर्जनका पोता हूं। सूर्य की किरणों से तेरे हीरे का प्रकाश देखकर इधर आया हूं और तुझसे मित्रता करना चाहता हूं"॥ ऋतुध्वज ने बाण को तूणीर मेंरख लिया चन्द्रचूड़ामुनि ने कहा "तुम प्रति दिन यहां आया करो हम तुम दोनों मृगया खेला करेंगे" फिर नागपुत्र ने ऋतुध्वज का अतिथ्य की भांति सत्कार कियाऔर उस दिन से वह प्रायः वहां जाकर अहेर आदि खेलों से जी बहलाता था। मदालसा ने पतिको घर में न देखकर पूछा कि 'तुम कहा आया जाया

करते हो परन्तु उसने कभी उचित उत्तर न दिया मदालसा चुप होरही फिर उस दिन से कभी कुछ नहीं पूछा।

जब पातालकेतु नें सुना कि मदालसा के साथ ऋतुध्वज का विवाह संस्कार होगया है उस को बड़ा शोक हुआ। पराई स्त्री को कुदृष्टि से देखना महापाप समझा जाता था। राक्षसों को भी इस घोर पाप का भय रहता था, परन्तु पाताल केतु के हृदय में वैर की आग सुलग रही थी मदालसा मिले य न मिले किन्तु ऋतुध्वजको दुःख देनाचाहिए। उसने यहबात ठानली कि किसी उपाय से उहको जय करूंगा। और मदालसा को इस प्रकार अलगकर देना चाहिए कि पता भी न लगे और वह पतिकी विरह में तड़पकर मरजाय। उसने अपने शरीर पर भस्म लगा

करके योगी कासा भेष बनालिया और अपना काम पूरा करनेके हेतसे बाहर निकला मार्ग में नारदजी मिले और पूछा कि यह स्वांग क्यों रचाहै" राक्षस बोला ',मदालसा की खोजमें जाता हूं। शत्रुजित के घर जाकर उसको देखूंगा। नारद तो हँसकर राही होगये, वह योगियों के भेषमें राजमन्दिर में चलागया। प्रभात का समय था, ऋतुध्वज नदीसे स्नान करके आ रहा था भीतर की डेवढ़ी पर साधुको देखकर पूछा "भगवन्। आप कौन है? यहां कैसे आये है और किस कारण यहां आते हो! कपट भेष साधू ने कहा " मै ब्राह्मण हूं मेरा नाम 'अतितेज' है एक सुन्दरी ,कन्या मेरे लड़के से इस-प्रकार विवाह करना स्वीकार करती है, कि यदि मदालसा का हीरा उसको मिल

जाय । मैंने सुना है कि मदालसा का व्याह अयोध्या में रितुध्वज राजकुमार से हुआ है और वह बड़ा दानी है यदि आपसे हो सके तो मुझको राजकुमार तक पहुंचा दो राजकुमार ने कहा "तुमने जिसका नाम लिया है वह मैं हूं, हीरा मेरे पास है परन्तु मैंने प्रतिज्ञा की है कि इसको किसी दशा में अपने हाथ से न अलग करूंगा" जब उसका मनोर्थ इस प्रकार सुफल न हुआ तो उसने चन्द्रचूड़ामुनि और ऋतुध्वज की मित्रता से लाभ उठाना चाहा और एक दिन भेष बदलकर राजकुमार से कहने लगा "आज चूड़ामुनि आखेट को जानेवाला है ऋतु भी अच्छी है और आपको बुलाया है" और जब तक राजकुमार वहां पहुंचे उसने जाकर चूड़ामुनि से कहा आज रितुध्वजका बड़ा काम है वह अहेर खेलने न जाय

ऋतुध्वजको कष्ट देना चाहता था इसी कारण उसने मदालसा को यमुना किनारे लाकर एक सुनसान स्थान में छोड़ आया था। वहां कोसों तक आदमी का शब्द नहीं आता था कोई चिड़िया का बीज भी वहां नहीं था राक्षस किसी उपायसे उस को खाना पीना पहुंचा देता था परन्तु भय के मारे सती के निकट नहीं आता था, वह दुखिया किसी प्रकार रो धो कर अपना दिन व्यतीत करती थी॥

एक दिन प्रातः काल जब वह स्नान करके पतीके ध्यान में व्याकुल हो रही थी तो चूडामुनि उसके पास पहुंचा मदालसा उस समय कह रही थी स्वामी तुम कहां हो कहां छिपे हो अपनी दासी मदालसा को क्यों भूलगये हो चूडामुनि ने सन्मुख आकरकहा „रानी धीरज धरो तेरा पति

तुझको भूलानहीं है वह बन मे पागलकी भांति तुमको ढूंढता फिरता है मदालसा उसके चरणों पर गिरकर कहने लगी देव बताओ राजा किस बनमें हैं ,, उसने उत्तर दिया ,, यदितू मेरे साथ चले तो मैं तुझ को पहुंचादूं , चूड़ामुनि उसको समझा बुझाकर अपने साथ आदर पूर्वक ले आया राजा पहिले की भांति मदालसा के विरह में व्याकुल ही था ,,

चूड़ामनिने ढाढ़स देकर कहा " यदि तू अपनाचित्त ठिकाने करले तो रानी तुझको अभी मिली जाती है परन्तु यहां तोकुछ औरही बातथी ॥

दोहा ॥

प्रीतम बिछुड़े हा दई कैसे आवे चैन ।
बिरह सतावे रैनदिन टप टप टपकत नैन ॥

ऋतुध्वज नियत समय पर आया चूड़ामुनि नहीं मिला वह बेचारा अकेला मृगया करने चला गया। इधर पातालकेतु ने अवसर पाकर दो चार आदमियों और स्त्रियों की सहायता से मदालसा को माया से बेसुध कर दिया और राज मन्दिर से उठाले गया और उसको छिपा दिया।

जब ऋतुध्वज लौटकर घरपर आया तो उसने अपनी स्त्रीके गुम हो जाने का समाचार सुना और व्याकुल होगया राजाने इधर उधर खोज कराया परन्तु उसका कहीं पता न पाया सब को बड़ा शोक हुआ ऋतुध्वज स्त्री के वियोग से बड़ादुखीहुआ घर बार खाना पीना सब छोड़दिया। उस का जी घबराने लगा वहघरसे बाहर निकला इधर उधर अपनी स्त्रीको खोजने लगा परन्तु उसका कहीं पता न लगा।

दोहा ॥

ग्राम नगर आराम वन, गिरकन्दर नद्नार ।
ढूंढथके चहुंओरहम, मिलानवहदिलदार ॥

अर्जुन पुत्र चन्द्र चूड़ामुनिने अपने मित्र की यह दशा देखी तो वह भी उसके संग रह कर इधर उधर खोजने लगा वह उस कोकभीकभीधीरजदेता परन्तु बातों सेधीरज असम्भव था वह अपने मित्र को ऐसी दशामें छोड़ कर आप अकेला खोजलगाने केहेतुबाहर चल निकला इधर उधरघूमते फिरते उसने एक साधूकी सहायता से यमुना किनारे उसका पता लगा लिया ।

पातालकेतु मदालसा के पतिव्रतधर्म्म कीदृढ़ताको भली भांति जानता था और वह यह भी समझता था कि उसका वशमें आना कठिन है इसी से उसने मदालसा के मिलने का ध्यान छोड़ दिया वह केवल

इस घटना के थोड़े दिन पीछे शत्रुजित के बनजाने का समय आगया। वह ऋतु-ध्वज को राज देकर बनको चलागया॥

ऋतुध्वज चिरकाल तक राज्य करता रहा। मदालसा के गर्भ से वीर और पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुए जिनसे सूर्य वंश का नाम सूर्यकी भांति प्रकाशित हुआ॥

धन्य धन्य भारत क्षत्रानी।
नीति निपुण शोभा गुणखानी॥
तुम सम को जगमें व्रतधारी।
शीलवन्त निज कुल हितकारी॥
धन्य २ तव पद कमल, परसि जाहि अतिप्रेम
भारतभूमि पवित्रथी, अग्निपरसि जिमिहेम

७

देवस्थमिता

दोहा।

चातक सुतहि पढ़ावहीं, आन नीर मत ले।
मम कुल एही रीति है, स्वाति बूंद चित दे॥

देवस्थमिता धर्म गुप्त एक बनिये की कन्या थी, धर्म गुप्त देवनगरी का निवासी था, बाल्यावस्था में पिता ने उसको अपनी अवस्था और लोक व्यवहार के अनुसार पठन पाठन की शिक्षा दी थी! देवस्थमिता स्वरूपवती, गुणवती सुशीला और धर्मात्मा थी। रामायण और महाभारत की कथाओं के अतिरिक्त उसको बुध धर्म सम्बन्धी कहानियां भी याद थीं। जब देवस्थमिता युवा हुई तो धर्मगुप्त ने ताम्रलि-

वह और व्याकुल होगया और पूछने लगा "सच बताओ वह कहांहै !" चूड़ामुनि ने कहा ", तुम पुकारो वह अभी इस घर से दौड़ी चली आवेगी" राजा ने उसी समय तीन बार चिल्ला कर पुकारा। तीसरी बार सच मुच मदालसा दौड़ती हुई आकर उस के चरणों पर गिर पड़ी। उस को देखकर ऋतुध्वज के जानमें जान आगई दोनों परस्पर प्रेमसे मिले चूड़ामुनिने तो चार दिन उनको अपने घर को भांति रक्खा। जब उनके चित्त ठिकाने हुए तब अयोध्या जाने की आज्ञा दी अयोध्या में ऋतुध्वज और मदालसा के आने से घर २ बधाई हुई और प्रजा को बड़ा ही आनन्द हुआ॥

जब यह विदित हुआ कि पातालकेतु रानीको उठाकर लेगया था ऋतुध्वज और चूड़ामुनि दोनों उससे बदला लेने के लिये

उद्यत हुए। पातालकेतु मदालसा को फिर धोखा देनेके हेतु से अयोध्या में आया इस बेर ऋतुध्वजने उसको पहचान लिया और क्षत्री धर्मके अनुसार उसको युद्ध करने के लिये प्रचारा राक्षस सामने आया। दोनों में मल्लयुद्ध होने लगा। ऋतुध्वज बड़ा बलिष्ठ और योद्धा था उसने राक्षसको देमारा और जब भूमि पर चित पटक कर उसकी छाती पर चढ़ बैठा उसका प्राण निकल गया॥

पातालकेतु के मरजाने से अब राजा रानीको किसीप्रकार का सोच नहीं रहा। दोनों आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे। मदालसा रात दिन अपने पति की आज्ञा पालन में तत्पर रहती थी और संसार उसको स्वर्गधाम प्रतीत होता था॥

दिया और स्वयं अलग २ रह कर ईश्वर का भजन स्मरण करने लगी। देवस्यमिता नित प्रति संध्या समय उसको धर्म पुस्तक सुनाया करती थी। मणिभद्र जो अबतक बाप के राजमें सुखचैन से दिन काटता था, इस घटना से उसको बड़ा शोक हुआ परन्तु यह ऐसी बात है जिसमे किसी का कुछ वश नहीं मरना जीना संसार का स्वाभाविक नियम है।

* दोहा *

आये हैं सो जायँगे, राजा रंक फकीर।
एकसिंहासनचढ़िचले, एकबांधेजातजँजीर ॥
आज कालके बीच में, जंगल होगा वास।
ऊपर २ हल फिरे, ढोर चरेगे घास ॥ २ ॥
हाड़ जले ज्यों लाकड़ी, केस जले ज्यों घास।
सब जग जलता देखकर, भये कबीर उदास॥३॥
कुशल २ हो पूछते, जगमें रहा न कोय।

जरा मुई ना भय मुआ, कुशल कहां से होय ?
पानी केरा बुदबुदा, इस मानुष की जात।
देखतही छिप जायेंगे, ज्यों तारा परभात ॥५॥
बड़े २ योधा रहे, सभी बजावैं गाल।
ओल्ह महल से लेचला, ऐसा काल कराल ॥६॥

मणिभद्र घोरज बरकर आपको जगह दूकान पर बैठा वह वाणिज्य ब्यापार में लिप्त था जब उसके मित्र ब्यापार के निमित्त परदेश जानेलगे तो उसको भी विदेश जानेकी इच्छा हुई। देवरथमिता को पति का बिछोह बड़ा दुखदाई हुआ। परन्तु यह उसका उद्यम था और उसकी प्रतिष्ठा ब्यापार द्वारा द्रब्य प्राप्त करने पर निर्भर थी।

बेचारी ने बड़े खेद और शोक से पतिको विदेश जाने दिया। स्त्री पुरुष दोनों ने अपनी अपनी अँगुली से मुद्रिका (अँगूठी)

इसी नगरी के मणिभद्र नामक एक सुन्दर धर्मज्ञ युवक से उसको ब्याह दिया। स्त्री पुरुष में परस्पर बड़ा प्रेम था देवस्मिता पतिव्रता स्त्री थी। घर भर उसके सदआ चरणों से प्रसन्न था। धर्म की शिक्षा पाने के कारण वह साधु सन्त और सन्यासी आदि की अधिक सहायता करती थी, भूखा दूखा जो कोई आजाताथा वह उसका सत्कार करती थी। अड़ोस पड़ोस की बहू बेटियों पर उसका विशेष प्रेम रहता था, वह तड़के भोर उठती और स्नानादि करके सब से पहिले अपनी सास और बड़ी बूढ़ियों के पांव लागती फिर घर के काम काज में लगतीथी, सास स्वसुरको उसने अपने सेवासे इतना प्रसन्न कर रक्खा था कि वह इसको घर का मालिक समझते थे और बिना उस के पूछे कोई काम नहीं करते थे। वह प्रायः

जब पड़ोस की स्त्रियों से मिलती तो उन को धर्म कर्म की बातें सिखाती थी। देवालय जाते आते भी इसी प्रकार की बात चीत होती थी। देवस्थमिता को पति के घर आये अभी बहुत दिन नहीं हुये थे कि उसने सब घरवालों को अपने बस में कर लिया। सब के हृदय में उसका विशेष प्रेम था, उसके परस्पर प्रेम, धर्मभाव कथावार्ता पूजा पाठको देख सास श्वसुर प्रायः कहा करतेथे कि यह हमारे कुलको पवित्र और उज्वल करनेवाली देवी है।

बिवाह होनेके पीछे बरसों तक उनका जीवन आनन्द पूर्वक व्यतीत होता रहा परन्तु दैव बश उसके श्वसुर का देहान्त होगया। उसका मरना था कि सासने सारे गृहस्थी का बोझा बहू के सिर पर डाल

वह उनके कार्यको सहायक बनगई। उस ने कहा "यह कौनसी बड़ी बातहै मैं देवस्य-मिता का सिर तुम्हारे पांव पर झुका दूंगी बनियों ने समझा "काम बनगया, उच्चकुल की वधू तपस्वनी के फन्दे से कभी न छूटेगी और वह कुछ दिनों पीछे मणिभद्रको स्त्रियों के नीच करतूतको सिद्धकर दिखायेंगे ॥

बूढ़ीको अच्छेप्रकार सिखा पढ़ाकर उन दुष्टोंने देवस्यमिता के घर भेजा । सुशील, पुण्यवंती देवीने उसको तपस्विनी जानकर बड़े आदर भाव से सत्कार किया और दया से उसके आने का कारण पूछने लगी। बुढ़िया जो सचमुच मक्कर की पुड़िया थी अपने मन्तव्य को छिपाकर उससे धर्मकर्म की बात करने लगी। देवस्यमिताने उसको तपस्यो की देवी समझकर बड़ा सत्कार किया और उससे कभी कभी आने के लिये

प्रार्थना की। "अन्धा क्या चाहे दो आंखें" बुढ़िया की मनोकामना पूरी होगई वह उसदिन से नित्यप्रति उसके घर आनेलगी।

जब परस्पर मेल मिलाप होगया वह इधर उधरकी परकटी सुनकर देवस्यमिताके यौवन और उसके पति के वियोग का शोक प्रकट करती। बेचारी भोलीभाली सती स्त्री धूर्त बुढ़िया का छक्का पंजा क्या समझती थी। वह जानती थी कि वह केवल मित्रभाव से कहती है और इसकारण उसने कभी इन बातों का ध्यान नहीं किया। एकदिन जब देवस्यमिता अकेली बैठी थी उसने उचित अवसर पाकर उसको कटाह देश से चार युवक बनियों के आनेकी सूचना दी और कहने लगी कि वह तेरे विरह में व्याकुल हैं और चाहते हैं कि तू उनको ओर प्रेम से एक बार देखले॥

उतारकर एक दूसरे को पहिना दी जिसमें परस्पर प्रीत का उनको स्मरण रहे।

जिस दिन मणिभद्र विदेशगया देवस्य-मिताने सारे आभूषण उतार कर रखदिये और सामान्य वस्त्र पहिनकर दिन काटने लगी। घरके काम काज से छुट्टी पाकर शेष समय अपने शीलके सतसंग कराने और पोथी पढ़ने में व्यतीत करने लगी।

मणिभद्र के पोते (जहाज) पर सवार होकर कटाह में आया और वहां दूकानरख कर व्यापार करने लगा। वहां उससेदो चार दुराचारियों से मित्रता होगई। जब लव्यान समय दूकान से छुट्टी मिलती यह सब एक स्थान पर बैठकर मदिरा पान करते थे और घृणित व असभ्य लोगों से अपना चित्त आनन्दित करते थे। इसके चारमित्र बड़े दुराचारी, असभ्य और कुमार्गी थे। एक

दिन जबवे मदिरासे उन्मत्त होरहेथे स्त्रियों को निन्दा करनेलगे। मणिभद्र जो नशे में चूर था, कहने लगा। "तुम झूठे हो स्त्रियां बड़ी भली और सुशील होती हैं मेरी स्त्री इतनी सती है कि लोग उसको देवीकीभांति पूजते हैं" बनियों ने मणिभद्र से उसके घर गांव का ठीक ठीक पता पूछ लिया और फिर परस्पर यह सम्मतिकी कि ताम्रलिप्ती नगर में पहुंचकर उसकी स्त्री से धोखा देकर मिलें और वहां से लौटने पर इसको नीचा दिखाकर लज्जित करें।

यह सोचकर वे दुराचारी ताम्रलिप्तीनगर में आकर एक बुध मन्दिर की धर्मशालामें ठहरे और अपने अन्याय का जाल फैलाने लगे। उस मन्दिर में एक वृद्ध भिक्षुनी रहती थी। बनियों ने उसको रुपये पैसे का लोभ दिखाकर अपनी ओर ढूढ़कर लिया। और

देवस्यमिता बूढ़ो तपस्विनी की बात सुनकर चकित होगई । उसको अब बुढ़िया के आनेका ठीक२ कारण विदित होगया । और वह हँस कर बोली "अच्छा मै कल तुम्हारी बातका उत्तर दूंगी । बूढ़ी चली गई, वह अब बड़ो प्रसन्न हुई फूली नहीं समाती थी कि वाह !अब तो फांस लिया है-और जब उसने अपने पाहुनों को उस सफलता का हाल सुनाया वह आनन्द सागर में डूब गये और उसको बहुत कुछ दिया लिया ॥

यहां बूढ़ो के जातेही देवस्यमिता ने अपनी सास से उसका चरित्र कह सुनाया सासने कहा "कलसे उसको घरकी ड्योढ़ी न झांकने देना" परन्तु देवस्यमिता बड़ी चतुर थी, उसने कहा "इन सबको बिना दण्ड दिए न छोड़ना चाहिये' उसने अपनी

सासको समझा बुझाकर अपनी चेरी को बनियों से रातके समय बात चीत करने पर आरूढ़ कर लिया ।

दूसरे दिन जब बुढ़िया आई देवस्यमिता ने हँसकर कहा—उन बनियों को आज अमुक स्थान पर ले आवो मैं उनसे पूंछूगी कि वे मुझसे क्यों मिलना चाहते है ।

रात्रि विषय में जब सब सोगये बुढ़िया ने एक २ करके बनियों को घरमें पहुचा दिया । कमरे के भीतर दो एक पुरुष भी बैठेथे उन मनुष्यों ने तपाये हुए लोहे से जिसपर कुत्तेके पञ्जे का चिन्ह बना हुआथा उनके माथे पर दागदिया और अँधेरी रातमें ऊपर से उनको दीवार के नीचे गिरा दिया बेचारों की जो दुर्गति हुई उसका लिखना व्यर्थ है । सूर्य निकलने भी न पाये थे कि वे लज्जित होकर मन्दिर से चुपचाप

भाग गये। और बुढ़िया से भी अपनी दशा न कह सके और माथे पर चोट लगने से कपड़ा बांध लिया।

देवस्यमिताने दूसरे दिन बुढ़िया को बुलाकर बडी जाचना की हजारों बातें पहिनाकर बोली "तूने व्यर्थ तपस्विनी का भेष बना रक्खा है" मुंह में सीताराम भीतर कसाई का काम"। भेष तो साधुनी का और काम कुटनियों का बस तू सचमुच इन्दारुन का फल है देखने मे बड़ा सुन्दर भीतर विष भरा हुआ। तेरे चारों मुस्टंडो को तो मैंने खूब मजा चखाया अब बोल तेरी क्या दुर्गति करू जिससे तेरी ऐसी भेषधारी स्त्रियों को चेत हो"॥

बुढ़िया डरी देवस्यमिता के पांव पर गिर पड़ी उसकी सास बीच बचाव करने लगी परन्तु देवस्यमिता ने कहा "जी नहि

दण्ड करों खल तोरा, भ्रष्ट होइ श्रुति मारग मोरा" जहां दुष्टों को यथावत् दण्ड नहीं दिया जाता वहां सदैव घोर पाप होता है और अन्तमें धर्म कर्म की बातों पर ठट्ठा होता है "॥

उसने अपनी सासकी सम्मतिसे उस देव मन्दिरके पुजारीको बुला भेजा और उस बुढ़िया की करनी सिरसे पांव तक कह सुनाई और उसको परामर्श दिया कि बुढ़िया को आगामी समयके लिये मन्दिर से निकाल बाहर करो और देवालयके स्त्री तथा पुरुषों की सदा जांच कीजाय जिसमें घर गृहस्थों के आचरण को न बिगाड़ सकें । पुजारीने ऐसाही किया और वह बुढ़िया डोकरी रोती हुई मन्दिर से निकाली गई ॥

इस घटना के दो चार दिन पीछे देवस्य-मिता सोचने लगी "ऐसा न हो अन्यायी

बनिये मेरे स्वामीसे कुछ घाट करें और वि देशमें उसके प्राणके घातक होजायें।" उस ने अपनी साससे कहा "माता ! तुम्हारे पुत्र का बहुत दिनों से कुछ समाचार नहीं मिला यह चारों पापी बनिये उसके सुहृद थे उनको मैंने ताड़ना दी है कौन जाने यह उनके साथ कुछ अन्त घाट न करें। यदि आप आज्ञा दे तो मैं स्वयं विदेश जाकर उनकी रक्षा करूं और क्षेम कुशल से घर लेआऊं। सास को पहिले कुछ सन्देह हुआ परन्तु वह जा-नती थी कि मेरी बधू धर्मात्मा और चतुर है और जब उसने भलीभांति ऊंचा नीचा समझा दिया उसने कहा 'यदि यही सम्मति है तो तू जाकर शीघ्र परदेश से लौट आना।

देवस्यमिता ने सास का पांव पकड़ा और अपनी चेरी के संग पुरुषों का भेष

बनाकर कुछ दिन जहाज पर मार्ग पूरा करके कटाह देश में आ पहुंची और अपने पतिके दूकान के निकट एक घर भाड़े पर लेकर बड़े ठाठ बाट से रहने लगी। मणि-भद्रने उसको देखा डील डौल सूरत शकल उसकी स्त्रियों की सी थी, परन्तु उसको साहस न हुआ कि कभी उससे मिले या उस से कुछ पूंछ सके उसने जाना "यह मेरे देश के किसी धनी का पुत्र है" ॥

कुसंगने मणिभद्रको कुछ और ही रंग में रँग दिया था। उसके चार मित्र जब ताम्रलिप्ती नगरी से आये थे तो बदला लेने के हेतु देवस्यमित्ता के विषय में बहुत कुछ उलटा सीधा झूठ सच बनाकर कह दिया था। वह अपनी पत्नी से मन में बड़ा अप्र-सन्न था इसीकारण वह और भी उसकी ओर ध्यान नहीं देता था।

देवस्यमिता ने वहां रहकर। उस देशकी सारी बातें सीखलीं और फिर एक दिन वहांके राजाकी सभामें जाकर प्रार्थना की "मेरे चार दास भागकर आपके राज्य में रहते हैं आप उनको ढूंढ़कर मुझे सौंप दीजिये" सूरसेन उस देशमें बड़ा धर्मात्मा और नीति कुशल राजा था, उसने विदेशी बनिये की चाल ढाल देखकर प्रसन्नता से कहा। "तेरेदास जहां हों वहांका पता बता दे कि वह बांधकर तुझे सौंप दिये जायें" देवस्यमिता ने तब उन चारोंके नाम बताए यह उस नगरके धनी पात्र सेठों के पुत्र थे। पहिले किसीको विश्वास नहीं हुआ परन्तु जब वह पकड़कर आये राजा ने देवस्यमिता से पूछा "जिनको तू दास कहती है वे मेरे देशके धनाढ्य महाजनों के पुत्र हैं

तुझको धोखा हुआ है ऐसा न हो तू उनके बदले स्वयं दुःखमें फँसजाये।

देवस्यमिताने कहा "मेरे दासोंके माथे पर कुत्तेके पञ्जेका चिन्ह होता है इन लोगोंने पगड़ी से उस चिन्हको छिपा रक्खा है आप खुलवाकर स्वयं देख लीजिये कि वे मेरे दास हैं या नहीं" जब राजाकी आज्ञानुसार उनको पगड़ी खोली गई तो माथे पर सचमुच कुत्तेके पञ्जेका चिन्ह बना हुआ था सबको बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि उनका दास होना किसीको विदित न था। राजा ने उनसे कई बार इस चिन्ह के विषय में पूछा परन्तु उन दुष्टों ने लज्जा के मारे चुपकी साधली और कुछ उत्तर न दिया॥

देवस्यमिता से न रहा गया उसने उन पापियों का अन्याय और उसकी ताड़नाका वृत्तान्त सिरसे पांव तक राजा से कह-

सुनाया। राजा उनके चरित्रों को सुनकर आग बबूला होगया और इस अपराध में बन्दीगृह की ताड़ना दी। परन्तु जब उनके पिता देवस्यमिता का पांव पकड़कर विनय करने लगे तो उसके कहने से वे छोड़ दिये गये॥

राजाने इस सती के सत्यब्रत धर्मको देख कर बड़ी प्रसन्नता प्रगटकी और बहुत कुछ धन धान्य देकर आदर पूर्वक ताम्रलिप्ती नगरी को बिदा किया। मणिभद्र भी अपनी स्त्री के चरित्रों को सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसकी सारी शङ्काएें दूर होगई और वहभी उसके संग अपने मातृ देशको चला आया॥

जब मणिभद्र की माताको सारा वृत्तान्त सुनाया गया उसने बहूको अपनी गोद से

चिपटा कर अपना कलेजा ठंढा किया और मुदित होकर कहा "बधू तू देवी है" ईश्वर तेरे सुहाग भागको अचल करे जब तक सूर्य चन्द्रमा आकाश मण्डल पर प्रकाशित हैं तेरी मांग मोतियों से भरी रहै। तेरी ऐसी देवियों से स्त्री जातिको प्रतिष्ठा प्राप्त होतीहै, जब नगर निवासियों ने यह समाचार सुना सब आनन्दित हुए और देवस्यमिता का प्रेम उनके हृदय में बिशेष उत्पन्न हुआ।

धन्य है वह देश धन्य है वह जाति जिस में ऐसी धर्मात्मा स्त्रियां उत्पन्न होती थीं, क्योंकि ये पवित्र स्त्रियां।

राजित हैं संसार में, कुल कलङ्क करिनाश।
उड़गणमहँजस चंद्रमा, शोभितअतिहिअकाश

अशूनमती

और उसका एक आख्यान

अशूनमती जंगलमे रहनेवाले सुप्रत मुनि को पतिव्रता स्त्री थी। बाल्यावस्थाही से इस को पठन पाठन में अधिक प्रेम था। इसके स्वभाव को देखकर भृगु ऋषिने अपने पास रखकर वेद आत्मज्ञान और पौराणादि की शिक्षा दी थी। इसकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी अल्प समय में एक पण्डिता कहलाने योग्य होगई। आत्मज्ञानके समझनेमें इसकी बुद्धि बडी तीव्र थी जब वह युवा हुई ऋषिने सुप्रत मुनिके साथ इसका विवाह करदिया। पतिके यहां आकर इसने उसके घर गृहस्थी को अच्छी तरह संभाल लियो, वह घर आये हुए अतिथियों की यथावत् आतिथ्य सत्कार

करती थी। उसके सद्‌गुणों की प्रशंसा सुन कर लोग दूर २ से उसके दर्शनको आते थे।

अशूनमती अपने घरकी अकेली थी परन्तु वह ऐसे उत्तम प्रबन्ध से घरका काम काज करती थी कि लोगोंको देखकर आश्चर्य होता था। वह भूखों को भोजन, प्यासो को पानी, नंगों को वस्त्र और रोगियो को औषधि देती थी जब कभी कोई रोगी आजाता वह अपने हाथ से उसकी चिकित्सा करती थी और समयानुसार उपदेश सुनाकर उसके जीवनको कुछका कुछ बना देतीथीं। आयुर्वैदिक वैद्य प्राचीन समयमें केवल चिकित्साही नहीं करते थे वरन् उनमें और भी उत्तम गुण होते थे जो आजकल के वैद्यों में नहीं पाये जाते। प्राचीन वैद्यों ने रोगों की तीन प्रणाली बना रक्खी थी शारीरिक अध्यात्मिक और आत्मिक इसलिये यह आ-

वश्यक था कि वह यदि आयुर्वेद शास्त्र में विज्ञ हों तो आत्मिक विद्यामें भी उनको इतना अभ्यास हो कि यदि कोई आत्मिक रोगी आजाये तो उसकी उस विद्यासे चिकित्सा की जाय ॥

अशूनमती जानती थी कि उन रोगों की औषधी क्या है, इसीकारण जब जैसा देखती थी उसी तरह उसकी चिकित्सा करती थी॥

उसकी आयु इसीप्रकार लोगों के आचरणों के सुधारने में व्यतीत हुई। और वह अपने परोपकार के कामके कारण उस समय दुखभंजन कहलाती थी, उसके उपदेश में वही बात होती थी, जो केवल साधुओं में हुआ करती है संसारमें वही साधू कहे जाते हैं जो बुराई के बदलेमें भलाई करते हैं और जब वह संसारमें जन्म लेतेहै तो उनके पवित्र स्वभाव से वहां की दशा कुछ विचित्र ही

होजाती है । अशूनमती भी ऐसीही साध्वी स्त्री थी ॥

यहां हम उसके उपदेशको संक्षेप रीतिसे लिखते हैं देवी के व्याख्या करने की रीति बड़ी सीधी सादी है पर तब भी उसके वाक्यों में अपूर्व गुणहैं जो मनुष्यके जीवन को बहु मूल्य बना देताहै वह एक व्याख्यानमें उप देश करते हुए कहती है-

(१) वह मनुष्य किसी पर दया भाव नहीं कर सकता जो आत्मिक बलसे बलवान नहीं है। इसलिये सबको उचित है कि इन्द्रियां को बसमें करके आत्मवृद्धि करे आत्मवृद्धि के बिना उसमें कभी सद्गुण न प्रगट होंगे जिसका मन अपने बसमें नहीं है वह अच्छे गुणों को कैसे बसमें रख सकताहै मन, वचन और कर्मसे बलवान हो। मन वचन और

कर्मको अपने २ आधीन रक्खो तब जाकर तुमको कुछ ज्ञान प्राप्त होगा और तब तुम कुछ समझ सकोगे कि जीवों पर किस प्रकार दया करनी चाहिये। दयाका भाव चन्दनके वृक्षसे सीखो। मनुष्य उसको कुल्हाड़े से काटता है पर चन्दन उसके कुल्हाड़े को भी सुगंधित कर देता है। चन्दन का यश संसार में फैला हुआ है कौन है जो उसकी सुगंधी को नहीं चाहता? कौन है जो उसकी धूलीको अपने माथे पर नहीं लगाता सब उसकी प्रतिष्ठा करते हैं और सबके हृदयमें उसके आदरको संस्कार रहताहै। जैसे चंदन की वास फैल आकाश को सुगन्धी से भर देती है वैसेही दया करने से तुम्हारी कीर्ति संसारमें फैलेगी। तुम आदर सत्कार की कामना कदापि न करो क्योंकि चन्दन किसी

से कहने नहीं जाता कि मेरी प्रतिष्ठा करो सब स्वयं उसके गुणको देखकर उसकी प्रतिष्ठा करते हैं तुम्हारा जीवन चन्दन की भांति दूसरों के अर्थ हो। चन्दनकी सुगन्धी आपही आप अन्य जीवों को अपनी ओर खींच लेती है। परन्तु चन्दन किसीको दुख नहीं देता वह जानता है सब अपने कार्यके सिद्ध होनेके लिये मेरे निकट आतेहै, वह सबकी सहता है सबके हृदय को शीतल करताहै। कुत्सित और दुराचारी लोगों से भी उसको हानि नहीं पहुंच सकती है"

चन्दन विष नहिं व्यापई, लिपटे रहत भुजंग।

(२) पुत्र और पुत्रियों के पढ़ाने लिखाने और लाभ दायक बातें सिखाने का समय केवल बाल्या वस्था है किन्तु जब तक आप अच्छे न होंगे कदापि आशा न करो

कि तुम्हारी सन्तान अच्छी होगी। सन्तान तुम्हारी खेती के बीज और फल हैं जो तुम बोवोगे वही काटोगे जैसे उनकी उत्पत्ती तुम से होतीहै वैसेही तुम्हारे आगामी आगामी आचरणों से उनके सिंचाव के लिये पानी मिलताहै। जैसा वह तुमको बोलते, करते व सोचते विचारते देखते हैं वैसाही करने लग जातेहैं। तुम अपने माता पिता और गुरुकी प्रतिष्ठा करो। तुम्हारी सन्तान में स्वाभाविक यह गुण प्रकट होगा। तुम प्रातः व सायंकाल ईश्वरकी उपासना करो तुम्हारे बच्चे स्वयं ऐसा करने लग जायेंगे। तुम अपने मुख से कभी अनुचित बात न निकालो तुम्हारे बच्चे असभ्य न बनेंगे। तुम मधुर बचन बोलो क्रोध न करो। बच्चे भी मीठी मीठी बातें करने लग जायेंगे। और किसी को दुर्बचन न कहेंगे। तुम आप अ-

पनी शिक्षा करो बच्चोंको तुम्हारे व्यवहारसे शिक्षा मिलेगी। बाल्यावस्था में पांच सात वर्ष तक बच्चों के आचरणको सुधार लो फिर आचार्य के पास विद्या सीखने को भेजो॥

(३) अज्ञानी मनुष्य सोचताहै कि "सुख विषय भोगमें है" यह उसकी बड़ी भूलहे जो मनुष्य मातंगरूपी प्रबल इन्द्रियों को ज्ञान रूपी अंकुश से बशमें नहीं रखते वह इस संसार में सदा दुखी रहते हैं। जगतके भोग विलास से इन्द्रियां कभी तृप्त नहीं होतीं, जितना ही सुखोपकारक सामग्रियों की वृद्धि होती है उतनाही कामनायें बढ़ती जाती है और अज्ञानी मनुष्य अपने आदर्श से नीचे गिरजाता है यह बुद्धिमानों का बचन है कि संसार में रहकर सारा समय भोगमें न गॅवावें जैसे चतुर सार्थी बागडोर खींचते हुए घोड़ों को अपने वशमें रखता है, बैसेही इन्द्रियां

तुम्हारे बशमें रहें तब तुमको किसीका भय नही रहेगा और संसार में केवल इतना व्यवहार करो जितना उचित है तब तुमको सुख मिलेगा। सुखका भंडार तुम्हारा निज मनहै। जैसे वायुके वेगसे झीलका पानी अशान्त हो जाताहै उसमें मुखका प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई देता वैसेही अशान्त मनमें आत्मिक सुखका अभ्यास नहीं प्रगट होता मनको वश करो, बुद्धिसे कामलो। बुद्धि चञ्चल न होने पावे तब तुम ऐसी दशामें निःसन्देह सुखी होगे" ॥

(४) परमार्थ बुद्धिका कभी अनादर मत करो। धर्म और कर्मकी बातों पर हँसी ठठ्ठा कभी मत करो। इससे तुम नास्तिक बन जाओगे फिर ईश्वर भक्तिका अंकुर मनमें न आवेगा और नास्तिकता के साथ सारे अवगुण तुम्हारे हृदय में बस जायेंगे। धर्म

को कदापि न मारो नहीं तो धर्म तुमको भी मारेगा। धर्मका मारा कभी नहीं उठता। धर्मकी रक्षा करो। धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा धर्मकी रक्षा किया हुआ कभी नहीं मरताहै जिसप्रकार थोड़े २ पानी से बड़े २ झील भर जाते हैं वैसेही थोड़े २ धर्मके प्रति दिन व्यवहार से मनुष्य धार्मिक बन जाता है। धर्म कीर्ति और अधर्म से अपकीर्ति होतीहै धर्ममें सच्चाई है और जहां सच्चाई रहती है वहां भय और लज्जा नहीं रहती। अधर्म झूठ और असत्य है और जहां असत्य रहता है वहां भय और लज्जा रहती है। तुम ऐसे बनों कि बड़ों की सभा में जाते हुए तुमको किसी प्रकार का भय और लज्जा न हो। शत्रू भी धर्मात्मा और सच्चे मनुष्य का आदर करते हैं।

(५) शुभ कर्म किया करो। दरिद्री होजावो

परन्तु बुरे कर्म कभी न करो तुम्हारो लोक परलोक सब कर्म पर निर्भर है जैसा मनुष्य करता है वैसा बनता है तुमने जैसा कर्म किया था वैसे ही बनेहो, आगे जैसा कर्म करोगे वैसा बनोगे। माता, पिता, भाई बंध स्त्री, पुत्र, धन और परिवार कोई संग नहो जाता। सब यहांके यहां रह जाते हैं केवल कर्म धर्म साथ जाता है। बुरे कर्म करोगे बुरे बनोगे। बुरो अवस्थां को प्राप्त होगे। शुभ कर्म करोगे अच्छे बनोगे। अच्छी अवस्था को प्राप्त होगे। कर्म कई प्रकारके होते हैं एक मनुष्य हाथ से दान करता है अथवा किसी निरपराधी को मारता है एक यह कर्म है कोई अपने बाणीसे किसीको प्रसन्न करता है अथवा दु खो करता है यह भी कर्महै, कोई किसी का भला किसी का बुरा सोचता है यह भी कर्म है और तोन

प्रकार के फल होते हैं। तुम्हारे हाथके और वाणी के कर्मको सब देखते हैं। मनके कर्म को तुम्हारा मन और साक्षी आत्मा जानता है और जैसे दर्पण में जब मैल जम जाता है तो किसी कामका नहीं रहता उसी प्रकार बुरे विचार वाले मनुष्य के हृदय की दशा है। पाप कर्म जन्म जन्मान्तर संग रहकर दुख देते रहतेहैं और मनुष्य नरक भोग करता है पापी मनुष्य अपना शत्रू आप है जो कर्म की गति को समझते हैं वह पाप के मार्ग पर कभी पांव नहीं रखते॥

(६) मोक्षका आधार ज्ञान है। ज्ञान, तप, स्वाध्याय, अभ्यास और ईश्वर परायन होने से आता है। जब तक मनुष्य जप नहीं करता उसका मन पवित्र नहीं होता और जब तक स्वाध्याय, अभ्यास और ईश्वर की उपासना नहीं की जाती ज्ञानका अधिकार

नहीं मिलता मनकी दशा तीन प्रकार की होती है "मल विक्षेप" और "आवरण" जिस मनसे मूढ़ता है समझ लो वह मैला है। जिसमें चञ्चलता उसमें विक्षेप का रोगहै जो ईश्वर को नहीं देखता अर्थात् ईश्वरका अनुभव नहीं करता उसमें आवरण (अज्ञान) है। दुःख भी तीन प्रकार के हैं अध्यात्मिक, आधिदैविक, और आधिभौतिक। यह दुःख भी इन तीन रोगों से ग्रसित हुए मन को ही होता है और उससे बचने का उपाय यह है कि मनुष्य तप, स्वाध्याय और ईश्वर का ध्यान रक्खे तब उसका आत्मा शुद्ध होगा। ज्ञानके प्रकाशके साथही मनुष्यको "मुक्ती" अधिकार प्रप्त होने लगेगा। और जन्म जन्मान्तर की सिद्धियां इकट्ठी होकर उसको भवसागर से पार कर देगी

(७) "जो कोई किसी बड़ेके समीप रहना

चाहे उसके ऐसा बनने का प्रयत्न करें जब उसमें वैसे गुण आजायेंगे आपही आप उसकी अभिलाषा पूरी होगी। हम सबको ईश्वरकी भक्ति का ध्यान है। हम लोग चाहते हैं ईश्वर के समीपवर्त्ती बनें हमारी इच्छा है ईश्वर हमको अपना करलें परन्तु यह बात केवल उस समय सम्भव होगी जब हम अपने मनको शुद्ध और पवित्र कर लेंगे ईश्वर शुद्ध है तुमभी शुद्ध बनो। ईश्वर मुक्त है तुम अपने बंधन काटने का यत्न करो, ईश्वर परोपकारी है तुमभी परोपकार करो ईश्वर सब पर दया करता है और उसका फल नहीं चाहता तुम भी अपने शुभ कर्मों का फल मत मांगो। ईश्वर के बशमें सारा ब्रह्मांड है, तुम अपनी इन्द्रियों को अपने बश करो क्योंकि तुम्हारा शरीर छोटा ब्रम्हाण्ड है और तब तुम ईश्वर के समीपवर्ती कहलावोगे" ॥

(८) तुम प्रातःकाल उठकर ईश्वरसे प्रार्थना किया करो "प्रभो ! मेरी बुद्धि को निर्मल कर जिससे शुभ और अशुभ कर्मों का ज्ञान हो और धर्ममार्गगामी बनूं । मुझको परोपकार करने की शक्ती प्राप्त हो मैं दूसरों पर दया करूं, मेरा संसार में कोई शत्रू न हो, और यह प्रार्थना निष्फल न जायगी। प्रार्थना करने का बहुत बड़ा महात्म यह है कि तुम अपने विचार द्वारा ईश्वर के समीप जाते हो और दिन प्रतिदिन ऐसा करने से कोई समय ऐसा आजावेगा कि तुम्हारे अशुभ कर्म घटने लग जायेंगे और तुम उस सर्वशक्तिमान जगत के स्वामीके सच्चे भक्त और सेवक बन जावोगे ॥

(९) "स्त्रियों के लिये इससे उत्तम कोई कर्म नहीं है कि वह मन, वचन, कर्म और सच्चे भाव से अपने पतिकी आज्ञाकारी है

वह सच्ची देवी है और उसको संसार में कीर्ति मिलती है। जो ऐसी नहीं है पापिनी है उसने स्त्री जातिके गौरव को नहीं समझा न वह घर को शोभा देती है न उससे घर वारकी भलाई होगी ॥

॥ दोहा ॥

पतिव्रता पतिको भजे, पतिभज धरे विश्वास।
आनदिशा चित ना नहीं, सदा जो पिउकी आस॥
तूतो पियकी प्यारिनी, अपना करलेरी।
प्रेम भाव हिय धारिले, चित चरनन देरी॥
नैनों अन्दर आवतू, नैन झांपि तोहि लूं।
ना मैं देखूं और को, ना तोहिं देखन दूं॥
आठ पहर चौंसठ घड़ी, मेरे और न कोय
नैनों मांही तू बसे, और को ठौर न होय॥
जो कोई एकै जानियां, तो सब जाना जान।

जो यहएकन जानियां,सबही जान अजान ॥
जोयह एक न जानियां, वहु जाने क्या होय ।
एकहि से सब होत है, सबसे एक न होय ॥
सब आये उस एकमें, डार पात फल फूल ।
कबीर पाछे क्यारहा, गहि पकड़ा जब मूल ॥
पतिव्रता तो पीवकी, मन वाचा पिउनेह
चितमेंप्रीतम घरकियो, बिसर रही सुधिदेह ॥
यह दासी समरथ्थ की, कोई पुरबुला भाग ।
सोई जागी सुन्दरी, सांई दिया सुहाग ॥
वह दासीसमरथ्थ की, कबहूं न होय अकाज ।
पतिव्रता नांगीर है, तो वाही पतिकी लाज ॥
पतिव्रता ऐसी रहे, जैसे पीले पान ।
तब सुख देखे पीवका, चित्त न आवे आन ॥

अशूनमती के इस प्रकार के प्रायः उपदेश हुआ करते थे, पतिको इसदेवी का बड़ा स्नेह था, और सब लोग यथावत उसकी

प्रतिष्ठा करते थे, बस देवीने सारी अवस्थाको परोपकार के कार्य्य में व्यतीत किया, और स्वर्गधाम जाने के पीछे अपनी अचल कीर्त्ति संसार में छोड़ गई ॥

परमात्मन् ! भारत में ऐसी उपदेश देने वाली देवियां उत्पन्न करो

१२

सती सावित्री

दोहे

ऊंचो तरुवर गगनफल, विरला पक्षी खाय।
इसफलकोतो वहभखे, जोजीवतही मरजाय॥
जबलगआश शरीरको, निर्भय भयो न जाय।
काया माया मन तजे, चौड़े रहै बजाय॥
मरने का भय त्याग कर, सत्त चिताचढ़देख।

पिवका दर्शन तब मिलै, जब मन रहै न रेख॥
सती चिता पर बैठकर, बोले शब्द गंभीर।
हमको तो सांईं मिलै, जब जरजाय शरीर॥
सती चितापर बैठकर, चहुंदिसआगलगाय।
यह तन मन है पीवका, पीव संग जरजाय॥
सती चितापर बैठकर, बोली वचन संभार।
जीवहा यों मर रहो, तब पावो भरतार॥
सती चितापर बैठकर, तजै जगतकी आश।
आंखोबिचपिउरमिरहा, क्यों वह होयउदास॥
सतीचितापर बैठकर, जीवत मिरतक होय।
खरी कसौटी प्रेमकी, झूंठा टिके न होय॥
आयेआये सब हटिगये, सती न छाड़ै संग।
वह तो पतिसंग यों जरै, जैसे दीप पतंग॥
प्रेमभाव मन छाइया, उड़ उड़ लागे अंग।
अग्नि जोतिकी मध्यमे, चमके पिउका रंग॥
मन मनसा भूमतागई, अहन गई सब छूट।

गगनमँडलमें घरकिया, कालरहो सिरकूट ॥
जो मरने से जग डरै, मोहि सदा आनन्द।
कब मरिहों कब पाइहों, पूरन परमानन्द ॥
मरते मरते मरगये, सच्चा मरा न कोय।
दास कबीरा यों मरे, फिर नहि जीना होय॥
जीते जीते सब मुये, जीता रहा न कोय।
दास कबीरा यों जिये, काल न पावे सोय॥
सती प्रेम बिच मगनहै, मन माती पिवरंग।
सहजै छाड़े देह को, ज्यों केंचुली भुजंग॥

सावित्री महर्षि ब्रह्माकी स्त्री थी, यह पूजनीय परमपवित्र, शुद्ध आत्मा और सरल स्वभाव वाली देवी थी। वह केवल कर्म धर्म और घर गृहस्थीके कामोंको ही नहीं जानती थी परन्तु अध्यात्मिक ज्ञान की बहुत अच्छी समझ बूझ रखती थी, उसके कुक्षसे चार पुत्र सनक, सनत्कुमार, सनन्दन और सनातन और एक पुत्री सरस्वती उत्पन्न

हुई थी. आजकल की तरह उस समय पठन पाठन का प्रचार नहीं था और लोग अक्षर तक न जानते थे न कहीं पुस्तकों का नाम था न पाठशालाओं का प्रबन्ध था, लोग वेद भगवान के मंत्रों को सुनकर कंठ कर लेते थे। विद्योपार्जन की प्रणाली ब्रह्मा के समय से नियत हुई है इसी कारण वेदों को श्रुती कहते हैं। सावित्रीने अपने संतानकी शिक्षा स्वयं की थी॥

सन्तान को सुयोग्य, सुशिक्षित और सुशील बनाने के लिये माताके समझ बूझको अधिक लाभदायक समझना चाहिये, सावित्री स्वयं गुणवती थी और इसके अतिरिक्त अध्यात्मिक विद्याको जाननेवाली थी, अतएव उसको पांचों सन्तान संसार में पांडित्ययुक्त और सर्वविद्या निधान होकर उच्च पदवी को प्राप्त हुई, और आज दिन भारत

भूमिमें उनकी कीर्ति की अचल ध्वजा फ-हराती हुई उनके महान गौरव की साक्षी दे रही है ॥

सावित्री अपनी सन्तान.को साथ रखकर और ऋषि पत्नियों की सभा में दूसरों को उनके साथ शिक्षा देती थी और नित्य नि-वृत्ति के आशय पर व्याख्यान देती थी। उसका परिणाम यह हुआ कि उसके सत्सं-गत के प्रभाव से उसकी संतान विरक्त हो गई और चारों ऋषि पुत्रों ने विद्या सीखने के पीछे अपने चित्त को एक मार्गगामी बनाया उनमें से सनत्कुमार आयुर्वेद विद्या का ज्ञाता और महान पण्डित हुआ है, सरस्वती जीवन पर्यंत ब्रह्मचारिणी रह कर अनेक विद्याओं की अधिष्ठता हुई, लेख प्रणाली, गणित, वार्तालाप, राग विद्या

सितार, वीन, बांसुरी, और मृदंगादि बाजे के प्रचार करने वाली यही देवी है ॥

सावित्री सत्संग में कहा करती थी "मनुष्य को संसार में बालक के समान निर्लेप रहना चाहिये क्योंकि इस युक्ति से जीवन व्यतीत करने में आत्म सुख प्राप्त होता हे और दुःख से छुटकारा मिलता है"। और उसके इस उपदेश का प्रभाव हम उसकी संतान में देखते हैं। यह बात अब तक प्रसिद्ध है कि सनत्कुमारादि बाल ऋषि हैं और सरस्वती का वृत्तान्त आप पर विदित है उसका चित्र जो आज कल बनाया जाता है उसमें भी उसके बचपन के भोले भाले चेष्टा की कान्ति के दिखला नेका प्रयत्न किया जाता है ॥

वास्तव में इसी प्रकार जीवन व्यतीत

करना चाहिये और जीवन पर्यन्त बालकों की तरह अपने चित्तकी वृत्तीको रखना चाहिये। हमको ईश्वरकी उपासना और सत्संगत की सहायता से बालकों की आवस्था को प्राप्त करना चाहिये। इसीको "परमहंसवृति" कहते हैं और यही अहिंसा रूपहै। यदि बालक किसी प्रकार की हानि भी करता है तो लोग उसको अनुचित नहीं समझे उसकी बुराई की ओर लोग नहीं देखते। परमहंस एक अबोध बालक है जिसने बाल्यावस्थाके अज्ञानताके अति-रिक्त और अपने स्वभाव को स्वयं छिपा रक्खा है। और उसके सहारे वह परमगति को प्राप्त कर लेता है। ऐसे अबोध बालक को माया भी अपने जाल में फँसने को असमर्थ है उससे सब प्रेम करते हैं सब

उसको चाहते हैं कोई उसको हानि नहीं पहुंचा सकते। न कोई उससे घृणा करता है। न कोई उसका शत्रू है। उसका आत्मा पवित्र है और उसका हृदय स्वच्छ है उसका चित्त यह निर्मल आकाश है जिसमें राग और द्वेष रूपी घटायें पवित्रता रूपी वायु प्रवाह से छिन्न भिन्न होजाती हैं। उसका स्वभाव शरद् ऋतुका स्वच्छ चन्द्र है जिसकी शीतल छाया चित्तको प्रसन्न और आनन्दित करती है, बालक मुसकराता है सब खिलखिला कर हँस पड़ते हैं, जिस स्थान में बालक खेलता कूदता रहता है देखने वाले बड़े प्रसन्न होतेहैं यही स्वभाव साधुओं के हैं और उनमें होना आवश्यकहै

॥ चौपाई ॥

बाल रूप सम जगमें रहो।

बालक बन सबको चित हरो ॥
बिचरो जगमें बाल समान ।
अस्तुति निन्दा करो न कान ॥
भोग बासना सबही त्यागो ।
बालक सम माता हिय लागो ॥
खेल कूद यों लीला ठानो ।
अन्त मातुके गोद समानो ॥
मोक्ष बन्ध का भय नहिं ताको ।
लोक लाजकी भीर न वाको ॥

धन्य है वह प्राणी जिनमें ऐसे स्वभाव होते हैं क्योंकि जीवन मुक्तिका अधिकार ऐसेही महानुभावों को होता है ॥

सावित्री घरके काम काज से छुट्टी पाकर अपना समय नीति, धर्म, पतिव्रत भाव और ईश्वरी ज्ञान सिखाने में व्यतीत करती थी। हिंदुओं के पौराणों में कहीं

कहीं लिखा है कि वह धर्मशास्त्र के संग्रह करने में ब्रह्माको सहायता देती थी। और ऋषि हर बातमें उसकी परामर्श लेताथा।

इस देवीका आत्मा और हृदय इतना स्वच्छ था और इसकी बुद्धि इतनी तीव्र थी कि उस समय भी इसके आचरण के प्राणी वहुत कम थे, परन्तु फिरभी वह कभी २ ऋषि से स्त्री धर्म की वातें पूछती रहती थी और उपदेश से अन्य स्त्रियों को भी लाभ पहुंचाया करती थी। सामवेद के के गानेमें यह अद्वितीय थी! जिस छन्द को यह अधिक प्रेम से गाती थी, ब्रह्मा ने उसे उसकेही नाम से प्रसिद्ध किया॥ (हम नहीं कह सकते कि यह बात कहां तक ठीक है)।

एक दिन सावित्रीने जिस प्रकार अपने

पतिकी स्तुति की थी उसका अनुवाद निम्न लेख से विदित होगा ॥

"स्वामी ! तुमसे संसार को विद्याका प्रकाश मिला है ॥

तुम सबके पूज्य हो मैं तुमको नमस्कार करती हूं। प्राणपति ! तुम मेरे मस्तक के चन्द्रमा, मेरे मन और बाणीके स्वामी हो तुमको नमस्कार करती हूं ॥

भगवन् ! तुम मेरे सहायक हो। जैसे तारागण सूर्य्य की परिक्रमा करते हैं वैसे ही मैं भी तुम्हारी परिक्रमा करती हूं। मैं तुमको नमस्कार करती हूं ॥

प्रियतम ! तुम मेरे दृष्टि में आनन्द स्वरूप हो तुम मेरी समझ बूझ, ज्ञान और भक्तिके आधार हो मैं तुमको नमस्कार करती हूं ॥

प्राणनाथ ! तुम दीन की रक्षा करने वाले, अशील के सहायक और अज्ञानियों के ज्ञान हो मैं तुमको नमस्कार करती हूं ॥

दयामय ! मैं तुम्हारी स्त्री, दासी और सेवक हूं अज्ञान बश जो कुछ अपराध हुआ हो क्षमा करो मैं तुमको नमस्कार करतीहूं ॥

दीन बन्धो ! यदि मुझको तुम्हारा सहारा न होता तो मेरी क्या दशा होती। मैं केवल तुम्हारे आसरे भवसागर पार करूंगी। मैं तुमको नमस्कार करती हूं" ॥

सावित्री प्रायः इसप्रकार की स्तुती किया करती थी, जिसका वृत्तान्त बहुधा पुस्तकों में भी पाया जाताहै। उसका आचरण बहुत उत्तम था, हमारी वर्त्तमान स्त्रियां अपने स्वभाव को सुशील और नम्र बनानेके लिये इससे शिक्षा ले सकती हैं ॥

ब्रह्मा इस अपनी धर्मपत्नी को बड़े प्रेम की दृष्टिसे देखता था और पति पत्नी दोनों परस्पर प्रेम में मग्न रहते थे ॥

ईश्वर करे सावित्री की जैसी सद आचरणवाली माताएं इस देशमें पुनर अवतार धारण करके भारत भूमिको पवित्र करें ॥

१३

गांधारी

यह रानी गन्धार देशके राजा सुबलकी कन्या थी इसका बिवाह धृतराष्ट्र से हुआ था, जो जन्म से अन्धा था, गन्धारी बड़ी सुशीला, बिचारवान और पतिव्रता स्त्री थी जब उसने सुना कि पति अन्धा है, आंखों से देख नहीं सकता उसने उसी समयसे अ-

पने नेत्रों पर भी पट्टी चढ़ा ली और उसी प्रकार स्वयं अन्धी बनकर हस्तनापुर आई जिन्होंने इसकी दशा देखी, बड़ा आश्चर्य किया वह राजा धृतराष्ट्र के सिवा और किसीके सामने पट्टी नही खोलती थी, इसका वचन था कि नेत्र केवल पती के दर्शन के लिये है यदि ईश्वरने उसको अन्धा उत्पन्न किया तो स्त्री को भी वही दशा ग्रहण करनी चाहिये, उसने जीते जी ऐसा नहीं किया॥

सम्भव है लोग उसके इस कर्तव्य को मूर्खता समझें, परन्तु जिस भावसे यह काम किया गया था, उसमें कैसी पवित्रता छुपी हुई है, यह सब जानते ही होंगे॥

महाभारत में यह देवी सबमें पवित्र और बड़ी भाग्यवती समझी गई है यहा तक कि

उसके पतिव्रत भावकी और कोई उपमा नहीं मिलती, महात्मा व्यास स्वयं इसकी बहुत श्लाघा करते हैं ॥

इस की सन्तान बहुत थी, परन्तु शोक! यह सबके सब दुष्ट निकले, यह पाण्डवों का अधिकार छीनना चाहते थे, धृतराष्ट्र भी अपने पुत्रों के कहने में आगया था, परन्त महाभारत युद्ध से पहले इस देवीने जो वचन अपने पतीको कहेथे निम्न लिखित हैं:-स्वामी! राजका लोभ कदापि अच्छा नहीं, दुर्योधन ने द्रौपदी का सभा के बीच से अनादर किया, पांडव बन २ घूमते रहे, यदि वह क्रोध करते हैं तो बुरा करते हैं, हमारे पुत्रों ने अनर्थ किया मुझको अपने कुलकी भलाई नहीं दिखाई देती जहां धर्म है वहां जय

और जहां अधर्म है वहां अजय रहती है, नितान्त इस देवीके वचन सच्चे निकले। दुर्योधनने इसकी कोई बात न सुनी यदि गधारी की चलती, तो कदापि युद्ध न होता, परन्तु होनहार को कौन रोक सकता है। दुर्योधनने कहा है ' सुईके नाकके बराबर भी युधिष्ठिरको भूमि न दूंगा' और कौरव पांडव दल कुरुक्षेत्र के मैदान मे डटगये, कौरव एक एक मारे गये पांडवों की जय हुई ॥

मां की ममता बुरी होती है, जब उसने अपने पुत्रो की मृत्यु को सुना, उसको बड़ा दुःख हुआ, दुर्योधन के साथियों ने द्रौपदी के पुत्रों को मारडाला, इसका गंधारी को अत्यन्त शोक हुआ, उसने स्वयं द्रौपदी के पास जाकर अपने पुत्रों के अपराध की क्षमा चाही थी ॥

सन्तानके नष्ट होने से धृतराष्ट्र गंधारी के साथ बनको चलागया, गंधारीने वहां भी अपने पति का साथ दिया क्षणभर भी उस से जुदी नहीं हुई और जब धृतराष्ट्र का अन्तिम समय आ पहुंचा, उसने भी साथ२ जान दे दी और पतिके साथ स्वर्गधाम को सिधारी, कौरव बंश में जहां बहुत से दुष्ट और कुमार्गी मनुष्य पैदा होगये थे वहां इस साध्वी देवी का जीवन अत्यन्त पवित्र और हरप्रकारके दोषो से रहित है।

इति शुभमस्तु

पुस्तक मिलने का पता—

श्यामलाल वर्मा

आर्य बुकसेलर—बरेली